चन्दामामा
मई १९९६
रु 5

GUESS WHO'S MY BEST FRIEND in SCHOOL ?
chelpark
Chelpark
chelpark
COMPASS
WITH DIVIDER ATTACHMENT
OIL PASTELS
MOPPLES WAX CRAYONS
CHELPAK RANGE OF PRODUCTS : WAX CRAYONS, WATER COLOUR CAKES, PEN, PENCIL, INK, OIL PASTELS, MOPPLES COLOUR SET, WATER COLOUR SET, GUM etc.
CHELPAK COMPANY PVT. LTD. A-93, Industrial Estate, Rajajinagar, Bangalore - 560 044. Phone : 91-080-3351562, 3351694
Option 98

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कॉमिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स
प्राण
बिल्लू का स्कूल
प्राण
रमन की मुर्गी
महाबली शाका और ब्लैक टाईगर
ताऊजी और गजु वानर
मैण्ड्रेक-41
डायमण्ड कॉमिक्स डाइजेस्ट
फैण्टम-54
जेम्स बाण्ड-44

FREE
Rasna®
DINO
SCARE
Game
Rasna
DINO-SCARE

थोड़ा खेलें, थोड़ा डराएं.

अब आपके मनपसंद रसना के 11 फ्लेवर्स का दुगुना स्वाद लीजिए. रसना सॉफ्ट ड्रिंक कॉन्सन्ट्रेट के स्टैन्डर्ड पैक्स पर छपे रसना डायनो गेम के पांच कूपन अदा करने पर आपको एक रोमांचक डायनो स्टोर गेम फ्री मिलेगा. अब आप कहते ही रहेंगे 'आय लव यू रसना'.

- रसना स्टैन्डर्ड पैक्स इस ऑफर के बिना भी उपलब्ध.
- यह ऑफर केवल 31 अगस्त 1996 तक लागू रहेगी.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

स्वयं व्यवसाय

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद पचास सालों से सत्तारूढ़ सरकारों ने शिक्षा-क्षेत्र में पर्याप्त सुविधाएँ विस्तरित की हैं - नयी-नयी पाठशालाएँ खोली गयीं, नये कालेज खुले और नये-नये विश्वविद्यालयों की स्थापना भी हुई। विभिन्न वृत्तियों में प्रवेश पाने के लिए नये-नये विषय भी चुने गये।

दुर्भाग्यवश, नौकरियों के लिए आवश्यक समानान्तर अवसरों की वृद्धि नहीं हुई, जिससे देश में शिक्षित बेरोज़गारों की संख्या बड़ी मात्रा में बढ़ गयी। इस समस्या ने गंभीर रूप धारण किया। हाँ, यह सच है कि विदेशों में भी यही स्थिति बनी रही। उदाहरण के लिए अमेरीका को ही लीजिये। वहाँ के शिक्षित बेरोज़गारों को सरकार से निर्वाह-धन दिया जाता है। मज़ाक भी किया जाता है इस रकम को पाने के लिए वे मोटर-गाडियों में जाते हैं।

हाल ही में संपन्न एक सम्मेलन में प्रश्न भी किया गया कि क्या प्रशिक्षित अध्यापक नौकरी के अभाव में अपना समय व्यर्थ करें? क्या वे किसी अन्य पेशे में अपने को लगा नहीं सकते ? अपनी क़ाबिलियत के दायरे में जो काम वे कर सकते है, क्यों न करें ?

शिक्षित व्यक्ति को चाहिये कि स्वयं व्यवसाय चुने और उसमें जी-जीन से लग जाए। जिन्होंने शिक्षा समाप्त की और आगे पढ़ने की जिनकी इच्छा नहीं है, उन्हें चाहिये कि वे गंभीर रूप से इस दिशा में अग्रसर हों।

वर्ष : ४९ | मई १९९६ | अंक : १०

एक प्रति : रु. ५/- | वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

समाचार - विशेषताएँ

सन्निहित संबंध

मार्च, २ को आस्ट्रेलिया में आम चुनाव हुए। इन चुनावों में जान हवार्ड नये प्रधान मंत्री चुने गये। प्रधान मंत्री के पद को स्वीकार करने के बाद उन्होंने कहा कि दक्षिण एशिया में सदृढ़ आर्थिक शक्ति के रूप में विकसित होते हुए भारत देश के साथ अधिक और सन्निहित संबंधों को स्थापित करना उनका आशय है। उनकी यह घोषणा आनंददायक है।

आस्ट्रेलिया का लेबर दल जब सत्तारूढ़ था, तब जान हवार्ड लगभग तेरह सालों तक विपक्षी दल लिबरल-नेशनल के संघ में रहे। अब इस दल ने १४८ प्रतिनिधियों की सभा में ९० स्थान जीते। चुनाव के दौरान सत्तारूढ़ लेबर पक्ष के प्रतिनिधियों की संख्या थी ७९। इस चुनाव में वे ५० स्थान ही जीत पाये।

आस्ट्रेलिया क्रिकेट क्रीडा के लिए सुप्रसिद्ध है। इसकी राजधानी है कानबेर्रा। पाल केटिंग के नेतृत्व में लेबर दल सुदीर्घ काल तक शासन संभालता रहा। अब लोगों ने परिवर्तन चाहा। पर यह परिवर्तन जनता ने विदेशी नीति अथवा आर्थिक नीति में नहीं बल्कि ट्रेड यूनियनों के केन्द्रित अधिकारों को घटाने के उद्देश्य से किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें दल तथा व्यक्तियों को बदलना पड़ा। मालिक तथा मज़दूरों के बीच में जो-जो समझौते हुए, उनमें ट्रेड यूनियनों ने अपनी इच्छा के अनुसार शर्तें रखीं, जिससे आपस में मन-मुटाव बढ़ता गया। इस कारण अनुशासन से संबंधित निर्णयों में भी यजमान कुछ नहीं कर पाये। वे कोई निर्णय लेने की स्थिति में नहीं थे।

चुनावों के समय लिबरल-नेशनल दल ने आश्वासन दिया कि भविष्य में ट्रेड यूनियनों की दखलंदाज़ी के बिना मालिक-मजदूरों की समस्याओं का निपटारा होगा। उनका यह आश्वासन मालिक और मज़दूरों को सही लगा।

कीटिंग की सरकार ने राजवंश की व्यवस्था का विरोध किया, जिससे ब्रिटेन से उसके संबंध कट गये। फरवरी, १६ को सर विलियम डीन २२ वें गवर्नर जनरल बने। उन्होंने पद स्वीकार करने के बाद कहा कि शताब्दी के अंत में आस्ट्रेलिया के अध्यक्ष का चुनाव होगा। उन्होंने यह भी कहा कि ई.स. २००० में स्वतंत्र रिपब्लिक में ओलंपिक क्रीडाएँ संपन्न होंगीं। क्रीटिंग ने भी चुनाव के दौरान यही घोषणा की।

जान हवार्ड पेशे से वकील हैं। वे ५६ वर्ष के हैं। वे १९८३ में माल्कम फ्रेज़र के मंत्रिमंडल में आर्थिक मंत्री रहे। अक्तूबर में वे हमारा देश आनेवाले हैं।

१९९४ में हमारे देश के १२५० विद्यार्थी उच्च शिक्षा पाने के लिए आस्ट्रेलिया के विश्वविद्यालयों में भर्ती हुए। यह संख्या पिछले साल २,५०० तक बढ़ी। आशा की जा सकती है भविष्य में दोनों देशों के संबंध और भी दृढ़ होंगे।
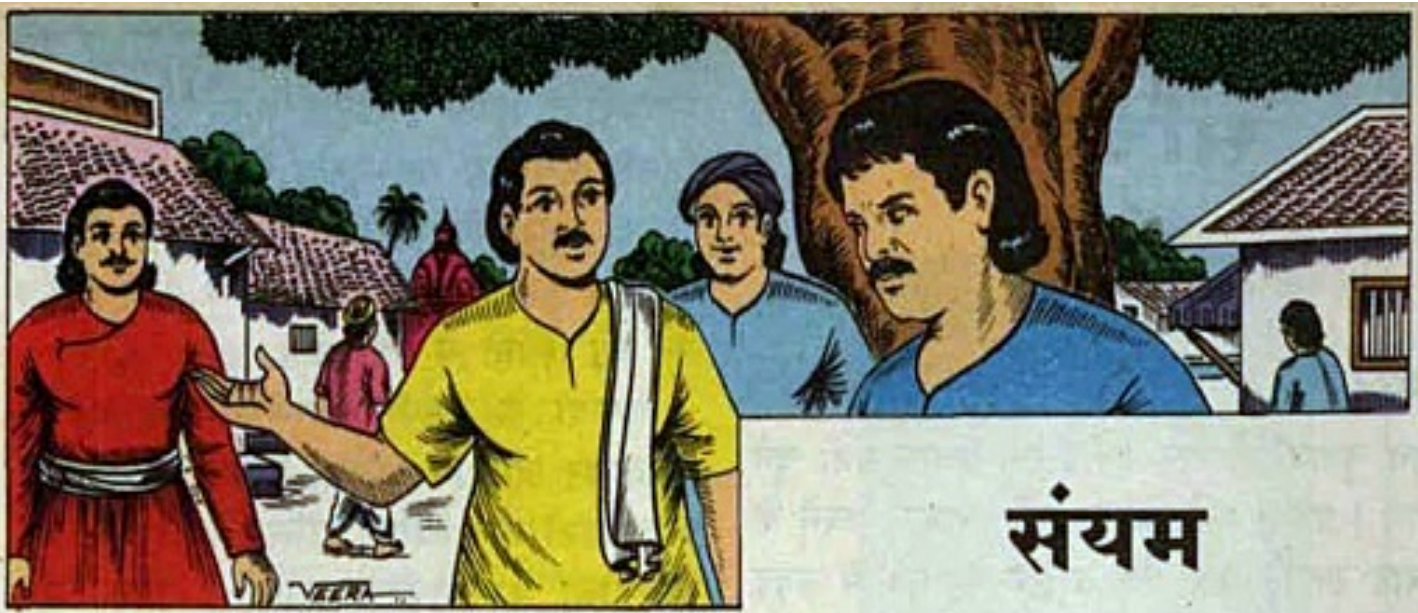
संयम

गंधार अपने हर काम में सफल होता था। पड़ोसी रमानाथ से कोई भी काम हो नहीं पाता था। इसलिए वह निराश रहता था। उसकी निराशा दिन-व-दिन बढ़ती जा रही थी।

कुछ मित्रों ने रमानाथ से कहा "गंधार में आग्रह है, जो तुममें लुप्त है। किसी भी काम की सफलता का आधार आग्रह ही है।"

एक बार एक साधु उस गाँव में आया। जनता के सामने चमत्कार दिखाता रहा और नाम कमाया। कितने ही ग्रामीणों ने उस साधु को भेटें दीं और अपनी मुसीबतें बताकर उनसे छुटकारा पाया।

गंधार ने अपने मित्रों से कहा "यह साधु लोगों को धोखा दे रहा है। अगर सचमुच यह साधु है, तो इसे भेंटों की क्या ज़रूरत ?"

कुछ मित्रों ने उससे कहा "क्या तुम साबित कर सकते हो कि यह धोखा दे रहा है ? गंधार ने कहा "मुझे इसके लिए कुछ समय चाहिये।" दोस्तों ने उसकी शर्त मान ली।

गंधार की तरह रमानाथ को भी संदेह हुआ कि साधु धोखेबाज़ है। उसने निर्णय कर लिया कि गंधार के पहले ही मैं साधु की पोल खोल दूँगा और साबित करूँगा कि वह धोखेबाज़ है। उसी दिन रात को वह साधु के यहाँ गया।

गाँव के एक कोने में स्थित पहाड़ी गुफ़ा में साधु रह रहा है। रमानाथ जब वहाँ गया तो उसने देखा कि साधु मस्त सो रहा है। जब वह ग़ौर से साधु को देखने लगा तो उसे शक हुआ कि साधु की दाढ़ी और मूँछें नक़ली हैं। उसने खींचीं तो वे निकल आयीं। साधु के जागने के पहले ही वह

कमलाकर

वहाँ से भाग गया। दूसरे दिन साधु जब ग्रामीणों से बातें कर रहा था, तब रमानाथ वहाँ आया। साधु को देखते ही वह चिल्लाने लगा "इस साधु का विश्वास मत कीजिये। इसकी दाढ़ी और मूँछें नक़ली हैं। उन्हें कल रात को निकालकर ले आया।" ग्रामीणों ने कहा "हमें मालूम नहीं कि तुम क्या ले आये। खुद देखो, उनकी दाढ़ी भी है और मूँछ भी।"

रमानाथ ने साधु को ग़ौर से देखा। हमेशा की तरह दाढ़ी भी थी और मूँछ भी। उसने साधु से कहा "कल रात को मैंने जान लिया कि यह दाढ़ी और मूँछ नक़ली हैं। तुम जब सो रहे थे तब मैंने उन्हें खींचीं और वे मेरे हाथ आ गयीं। अब वे मेरी भुजा में लटकती हुई थैली में सुरक्षित हैं। फिर से नयी नक़ली दाढ़ी और मूँछ लगाकर आये? इन्हें भी मैं खींचूंगा।" कहकर वह हाथ बढ़ाने लगा।

साधु ने उसे पीछे ढकेला और कहा "अज्ञानी हो। तुम्हारी ग़लती शायद मैं माफ़ कर दूँ, पर भगवान माफ़ नहीं करेंगे। तुम कही ग़लती कर ना बैठो, इसीलिए मैंने तुम्हें पीछे ढ़केल दिया। किसी बुरे विचार से प्रेरित होकर, अगर कोई मेरी दाढ़ी छूने का साहस करेगा तो भगवान उसे शाप देंगे; उसका सर्वनाश हो जाएगा। यह दाढ़ी और मूँछ तो क़तई नक़ली नहीं
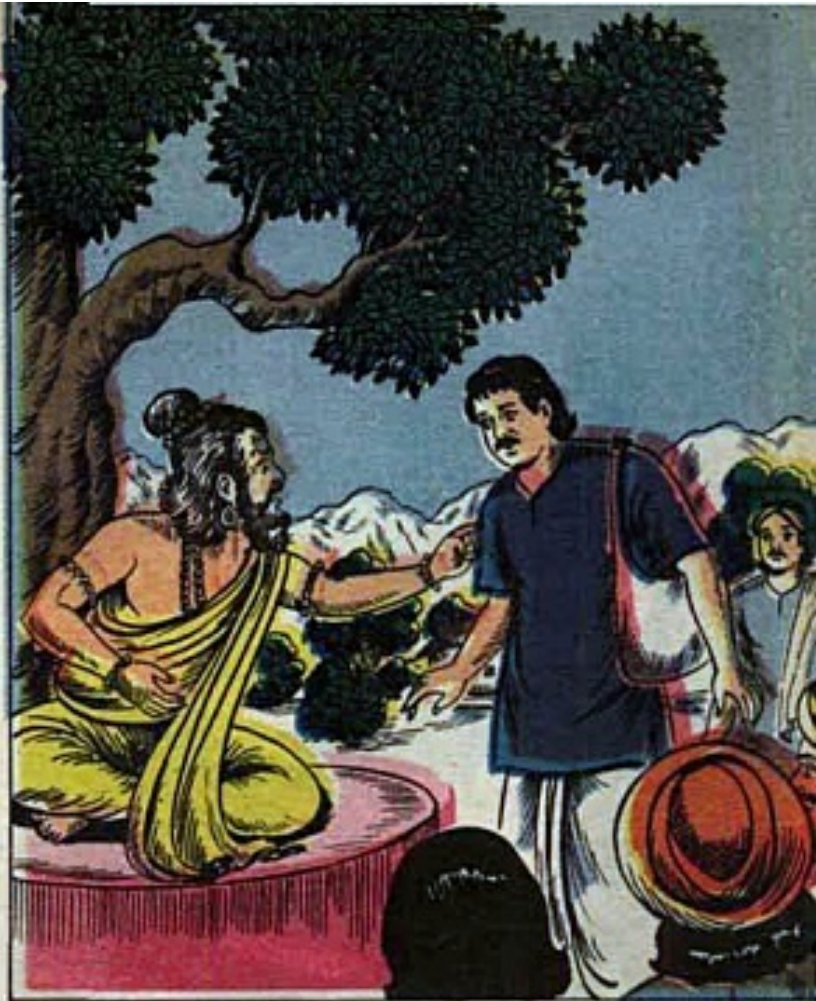
हैं। जिस दाढ़ी और मूँछ की बात तुम कर रहे हो, उन्हें मुझे दिखाना। मैं भी देख लूँ कि वे कैसी हैं?"

रमानाथ ने थैली में हाथ डाला तो वहाँ कुछ नहीं पाया। वह भौंचक्का रह गया। उसकी समझ में नहीं आया कि वे कैसे ग़ायब हो गयीं। वह एकदम चिल्ला पड़ा "धोखा, दग़ा। साधु ने जादू किया और ग़ायब कर दिया।"

उसकी बातों पर किसी को विश्वास नहीं हुआ। ग्रामीणों ने साधु से माफ़ी माँगी। रमानाथ शरम से सिर झुकाकर वहाँ से चला गया।

रास्ते में उसकी मुलाक़ात गंधार से हुई।

पूछा "तुम यह सब कैसे जानते हो?"

गंधार ने कहा "किसी भी काम में जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये। शांति से सोचना चाहिये। तब किसी भी समस्या को सुलझाने में कठिनाई नहीं होगी।"

रमानाथ ने उत्साह-भरे स्वर में कहा "तो अभी चलो, उसका भंडा फोड़ देंगे।"

गंधार ने अपनी विमुखता जताते हुए कहा "रमानाथ, जल्दबाज़ी में ऐसा करने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। वह यह गाँव छोड़ देगा और किसी और दूसरे गाँव में जाकर वहाँ के लोगों को धोखा देगा, उन्हें अपने जाल में फँसायेगा। हमें तो चाहिये कि लोग साधु के हाथों धोखा न खायें और साथ ही हमारी यह कोशिश हो कि साधु को अच्छा आदमी बनावें, उसके स्वभाव में परिवर्तन लायें। तभी हमारे लक्ष्य की पूर्ति होगी।"

गंधार दूसरे दिन साधु से एकांत में मिला और उसके बारे में उसके जाने सारे विवरण सविस्तार बताया। इन्हें सुनकर साधु घबरा गया। फिर गंधार ने साधु से कहा "ड़रो मत। तुम्हारे बारे में मैं किसी से कुछ नहीं बताऊँगा। तुमने इन ग्रामीणों से जो-जो भेंटें लीं, उन्हें वापस दे दो। उन्हें बताना कि तुमने उनकी भेंटे लेकर उनकी परीक्षा मात्र ली। यहाँ से सीधे इंद्रपुर लौटो और सन्मार्ग पर चलकर अपना जीवन धन्य

उसने रमानाथ के उदास चेहरे को देखकर पूछा "क्या हुआ? उदास क्यों हो?" रमानाथ ने उसे सविस्तार बताया कि क्या हुआ।

"इसमें कोई संदेह नहीं कि वह साधु धोखेबाज़ है, ढ़ोंगी है। वह जादूगर है, इसीलिए वह तुमसे बच गया। पर मुझसे बचना नामुमकिन है।" गंधार ने कहा।

कुतूहलवश रमानाथ ने पूछा "तुम क्या करने जा रहे हो?" "मुझे साधु के बारे में बहुत-कुछ मालूम हुआ। उसका असली नाम है बैरागी। वह इंद्रपुर का है। कभी साधु बनता है तो कभी और कुछ।"

रमानाथ ने आश्चर्य प्रकट करते हुए

बनावो ।"

साधु ने गंधार की बात मान ली। ग्रामीणों को भेंटें लौटायीं। ग्रामीणों ने बड़े आदर के साथ उसे बिदा किया। वह अपना गाँव चला गया। यह देखते हुए रमानाथ को बड़ा दुख हुआ। उसने सच बताया, पर क्या फ़ायदा? उसकी बात किसी ने नहीं सुनी, उल्टे उसकी हँसी उड़ायी। गंधार ने सच छिपाया और गाँव की भलाई की। साधु में परिवर्तन लाने में सफल हुआ। इस सफलता के पीछे है - सोच-समझकर काम करने की उसकी शैली।

उसने निर्णय कर लिया कि वह भी इसी पद्धति को अपनायेगा। इसे साबित करने का मौक़ा भी उसके हाथ शीघ्र ही आया।

रमानाथ की माँ गौरी हर दिन नदी पर जाती और पीने के लिए घड़ा भर पानी ले आती। उस दिन जब पानी ले आयी तो उसका पैर फिसल गया और सारा पानी नीचे गिर गया। गौरी ने बेटे से कहा कि पड़ोसी गंगाराम से कहकर एक घडा भर पानी मँगवा लेना। रमानाथ, गंगाराम से यह कहने जा रहा था तो सामने से वह खाली घड़े लिये लौट रहा था। वह बहुत ही खुश दीख रहा था। रमानाथ के कुछ कहने के पहले ही वह वहाँ से चला गया।

रमानाथ ने उसका पीछा किया। थोड़ी दूर जाने के बाद गंगाराम अपनी झोंपड़ी में

घुस गया। रमानाथ भी अंदर जाना चाहता था, लेकिन उसने देखा कि दरवाज़ा बंद है। वह दरवाज़े के छेदों से देखता रहा।

आश्चर्य। जिन घडों को उसने खाली समझा था, वे खाली नहीं थे। उनमें आधे भाग तक तेल भरा हुआ था। गंगाराम ने एक बड़े डिब्बे में से किसी द्रव पदार्थ को उन घडों में उँडेला। फिर उन्हें लेकर वह बाहर आया। रमानाथ उसके पीछे-पीछे गया तो उसने देखा कि वह साहुकार पूर्णचंद्र के घर के अंदर जा रहा है। अब उसकी समझ में आ गया कि साहुकार उससे तेल में मिलावट का काम करा रहा है।

रमानाथ, गंधार से मिला और वह सब

कुछ बता दिया, जो उसने देखा। उसने कहा "अब मैं सावधान रहूँगा। अक़्लमंदी से पेश आऊँगा। तेल में कौन-सा द्रव मिलाया गया है, कहाँ से वह यह खरीदा जा रहा है आदि की पूरी जानकारी पाऊँगा और साहूकार की पोल खोल दूँगा।"

यह सुनते ही गंधार वहाँ से दौड़ पड़ा। गाँव के लोगों को इकट्ठा किया और उनसे बताया कि साहुकार कैसा बुरा काम करा रहा है। साहुकार ने इस आरोप को बिल्कुल झूठा बताया। किन्तु जब गंधार झोंपड़ी में से मिलावट के द्रव से भरे डिब्बे को ले आया तो साहुकार की समझ में नहीं आया कि असल में बात क्या है और ऐसा कैसे हुआ? उसने गंगाराम से पूछा कि तुमने ऐसा क्यों किया?

बात अब साफ़ हो गयी। साहुकार की पत्नी ने चाहा कि त्योहार पर अच्छी साड़ी खरीदूँ। साहुकार ने साफ़-साफ़ मना कर दिया। तब उसने गंगाराम को पैसों की लालच दी और उससे मिलावट का तेल बिकवाकर धन कमाना चाहा। दुर्भाग्यवश पहले ही दिन गंगाराम पकड़ा गया।

गाँव के लोगों ने गंधार की प्रशंसा की और साहुकार पर ताने कसे।

यह सब देखते हुए रमानाथ बहुत ही नाराज़ हो गया। वह गंधार से उसके घर पर मिला और कटु स्वर में पूछा "तुम तो मुझसे कहते रहे कि शांति से काम लो, सोच-समझकर काम करो। जो बातें मुझे मालूम हुईं, उन्हें तुमने मुझसे पहले सबसे कह दीं और लोगों की प्रशंसा के पात्र बने। क्या यह तुम्हें ठीक लगता है?

सब ग्रामीणों को इकट्ठा करके तुमने ही उन्हें सावधान किया। इससे तुम्हारी ही तारीफ़ हुई, तुमने ही नाम कमाया। अगर मैं यह काम करता तो मेरी प्रशंसा होती।" रमानाथ ने अपना आक्रोश प्रकट किया।

गंधार ने धीरे से कहा "तब तो तुम ही ग्रामीणों को सावधान कर सकते थे।"

"ऐसा कैसे हो सकता है ? तुम्हीं तो

कहते थे कि मैं शांत रहूँ, संयमित रहूँ, समझ-बूझकर काम करूँ ।'' रमानाथ बोला ।

इसपर गंधार मुस्कुराता हुआ बोला ''हाँ, बात सच है, परंतु यह शांत रहने का समय नहीं है । मालूम नहीं, इस मिलावट के तेल को इश्तेमाल करने से कितने लोगों का स्वास्थ्य ख़राब हो जायेगा । हो सकता है, जानें भी चली जाएँ । इस दुर्घटना से लोगों को बचाना मेरा तक्षण कर्तव्य है, इसलिए तुम्हारी बातें सुनते ही मैं दौड़ पड़ा । ख़तरा टल गया । बोलो, है कि नहीं ।''

रमानाथ ने कहा ''पर साधु के विषय में तो मुझे संयम से काम लेने को कहा ।''

''हाँ, तब तो हमें शांत और संयमित ही रहना था । साधु को सज़ा देना ज़रूरी नहीं था । अब की बात अलग है । इसमें तक्षण ही काम पर लग जाना आवश्यक है । मुझे लगा कि साहुकार का भंडा फोड़ना ज़रूरी है, जो मैंने किया ।''

रमानाथ ने दीन स्वर में पूछा ''यह कैसे मालूम हो पायेगा कि संयम से काम लेना कब ज़रूरी है और कब ज़रूरी नहीं।'' ''तुम्हारा मतलब विवेक से है ना? तुम अपने ही बारे में सोचना छोड़ दो और दूसरों के बारे में सोचने लगो । तुम जो काम कर रहे हो, सोचो कि उससे दूसरों की क्या भलाई हो रही है । यह न सोचो कि अपनी क्या भंलाई हो रही है । ऐसा सोचना स्वार्थ कहलाता है । दूसरों की भलाई के बारे में जो पवित्र व निस्वार्थ हृदय से सोचता है, उसमें किसी के कहे बिना ही विवेक-गुण आप ही आप भर जाते हैं । विचक्षण-ज्ञान का वह आदी हो जाता है ।''

रमानाथ को अपनी त्रृटि मालूम हो गयी । शरम से उसने सिर झुका लिया । इसके बाद, जो भी काम वह करता था, गंधार की सलाह को मद्देनज़र रखकर ही करने लगा । क्रमशः जो भी काम वह करने लगा, उसमें वह विजयी होने लगा ।

मकर लग्न

एक बहुत बड़े ज़मींदार की कचहरी में नागभद्र नामक एक दीवान था। उसे धन की तीव्र दुराशा थी। ज़मींदार उसका विश्वास करता था। इस विश्वास की आड़ में वह किसानों से ही नहीं, बल्कि दरबार में नियुक्त कर्मचारियों से भी भेंटों के रूप में पैसे ऐंठता था। कभी-कभी उनसे सोने के आभूषण भी ऐंठता रहता था।

नागभद्र का जन्म हुआ कर्काटक के केकडा के कडा लग्न में। उसके जन्मदिनोत्सव के अवसर पर कर्मचारियों ने सोने से बना केकडा भेंट-स्वरूप दिया।

नागभद्र ने उसे घुमा-फिराकर देखा और उन कर्मचारियों की प्रशंसा करते हुए कहा "कर्काटक लग्न में जन्म लेनेवाले व्यक्ति छोटों से लेकर बड़ों तक के प्रेम व अभिमान के पात्र होते हैं। इसका प्रत्यक्ष साक्षी मैं स्वयं हूँ। यह इस लग्न की महत्ता है। अच्छा हुआ, समय पर याद आया, इसलिए मैं तुम लोगों को अभी सूचित कर रहा हूँ। अगले महीने में मेरी पत्नी का जन्म-दिन है। उसका जन्म-लग्न है मकर। आप तो जानते ही होंगे कि मकर का मतलब है मगर।"

उधर से गुज़रते हुए ज़मींदार ने नागभद्र की बातें सुन लीं। उसने दीवान से कहा "दीवानजी, मेरा जन्म-दिन भी आपको याद होगा। अगली पूर्णिमा के दिन। मेरा सिंह लग्न है। भेंट देते समय इसे अच्छी तरह याद रखियेगा।"

-सुभद्रा
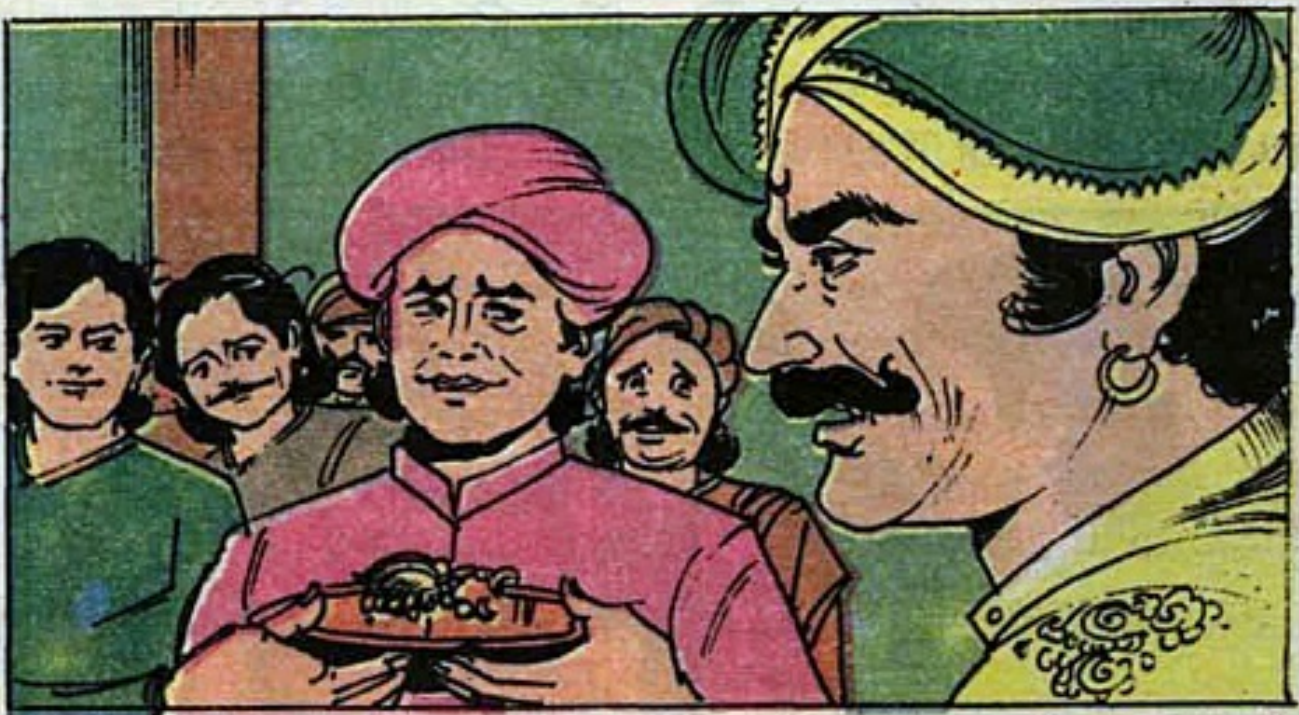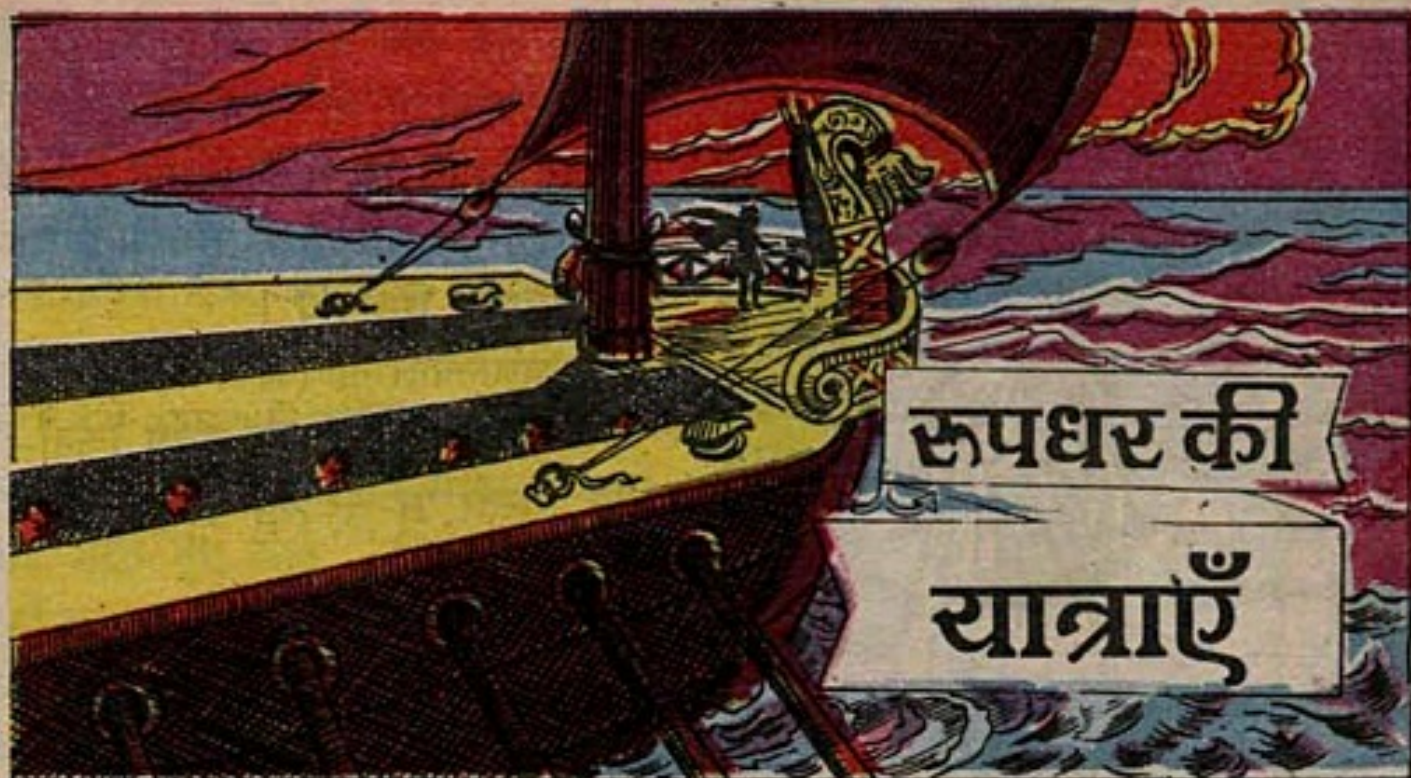
१०

(रूपधर ने समुद्र पर तरह-तरह की यातनाएँ सहीं। अपनी नौकाएँ तथा अनुचर खोये। पैयासिया तट पर पहुँचने परउसे महाराज बुद्धिमान का आतिथ्य तथा अभय मिले। उसके सम्मानार्थ खेल-कूद की स्पर्धाएँ हुई। इसके बाद जो दावत हुई उस अवसर पर अंधे गायक ने 'काठ के घोड़े' की कथा बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत की। यह गाथा सुनते-सुनते उसकी आँखों से अनायास ही आँसू बरस पड़े। उसकी इस विचित्र स्थिति को देखते हुए महाराज बुद्धिमान ने उससे पूछा "तुम कौन हो? किस देश के वासी हो?")- बाद

रूपधर ने महाराज को अपना पूरा वृत्तांत बताया। और बताया भी कि ट्रोय के पतन के उपरांत उसे किस-किस प्रकार की मुसीबतों का सामना करना पड़ा। उसकी कहानी सुनकर महाराज और वहाँ उपस्थित सब लोग आश्चर्य में डूब गये।

महाराज ने वहाँ उपस्थित प्रमुखों से कहा "हम सब लोग मिल-जुलकर भेंटे देंगे। मैं स्वयं इन्हें थोडा-सा सोना, वस्त्र तथा अन्य भेंटें दूँगा।" शेष लोगों ने भी अपनी-अपनी भेंटों की घोषणा की।

दूसरे दिन सबेरे ही सारी भेंटें बंदरगाह पहुँचायी गयीं। बुद्धिमान ने स्वयं उन भेंटों को नौका में क़रीने से रखवाया। उस दिन राजभवन में रूपधर के सम्मान में बहुत बड़ा भोज दिया गया। सब लोग आनंद-सागर में डुबकियाँ लगा रहे थे, किन्तु रूपधर मात्र स्वदेश लौटने के लिए अति

आतुर था। वह बड़ी बेचैनी से उस घड़ी का इंतज़ार कर रहा था।

भोज समाप्त होने के बाद रूपधर ने उपस्थित प्रमुखों को संबोधित करते हुए कहा "महाजनों, इतनी दीर्घ अवधि के उपरांत मेरी तीव्र इच्छा पूर्ण होने जा रही है। मैं अपना देश लौट रहा हूँ। आपने मेरा आदर किया, मेरी बड़ी सहायता की, कितनी ही भेंटें दीं, इन सबके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैं यह कभी नहीं भूल सकता। देवताएँ आपको आनंद, सुख-शांति, विजय प्रदान करें। मेरी आशा है कि आपका देश सब प्रकार के संकटों से मुक्त रहेगा।" उसकी उक्त बातों पर वहाँ उपस्थित सब लोग बहुत ही हर्षित हुए। रूपधर ने रानी से भी बिदा ली। उसने, उसे सुंदर पोशाकें भेंट में दीं। उसने दासियों के द्वारा भरपूर रोटियाँ व लाल अंगूर रस नौका के पास भिजवाये।

नाव चलानेवाले नाविकों ने नाव के अंदर रूपधर के लिए बिस्तर का प्रबंध किया। रूपधर बिस्तर पर लेट गया। नाव निकल पड़ी।

रूपधर नींद की गोद में चला गया। उसका मन इस आनंद से मस्त था कि जल्दी ही स्वदेश पहुँचनेवाला हूँ और सब कष्टों से दूर हो गया हूँ। नाव वायुवेग से चलती गयी और निश्चित समय के पहले ही इथाका पहुँच गयी।

इथाका के तट पर एक बंदरगाह था। वहाँ जो जहाज पहुँचते हैं, उन्हें लंगर उतारने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती। इसके नज़दीक ही एक बड़ा पेड़ है। उस पेड़ के पत्ते चौड़े हैं। उस पेड़ के पास ही एक गुफा है। उसमें मधुमक्खियों के छत्ते हैं। पथ्थर के ऊंचे-ऊंचे खंभे हैं। कहा जाता है कि उसमें देवकन्याएँ आती रहती हैं। उसमें आदमी आ-जा सकता है।

जैसे ही नौका किनारे पर पहुँची, नाविक कूद पड़े। नींद में मस्त सोये हुए रूपधर को उन्होंने नहीं जगाया। बिस्तर के साथ-साथ जैसे के तैसे उसे भी तट पर ले आये

और रेत पर रख दिया। फिर उन्होंने सारी सामग्री उतारी और उसके बग़ल में रखकर अपना देश लौट पड़े।

आँखें खुलने के बाद रूपधर ने चारों तरफ़ अपनी नज़र दौड़ायी। घने कोहरे के कारण उसकी समझ में नहीं आया कि वह कहाँ है। सामने के बंदरगाह तथा पर्वतों को भी वह पहचान नहीं पाया। उसने आह भरते हुए कहा "बाप रे, फिर से कहाँ आ गया? पता नहीं, यहाँ किस प्रकार के लोग रहते हैं। कहीं वे क्रूर और नरभक्षक तो नहीं? इतनी भेंटें मेरे पास हैं, पर इनका मैं क्या करूँ, कहाँ रखूँ? महाराज बुद्धिमान ने पूर्ण रूप से मुझे सहयोग नहीं दिया। वचन तो दिया कि इथाका पहुँचाऊँगा, किन्तु मुझे पहुँचाया कहीं और।"

सब वस्तुओं को गिनकर देखा। सब थीं। अपने देश के बारे में सोचता हुआ वह इधर-उधर टहलने लगा। तब वहाँ एक चरवाहा आया। उसे देखकर रूपधर की जान में जान आयी। उसके पास आकर उसने कहा "भगवान की तरह दर्शन दिया। तुम्हीं मुझे बचा सकते हो। बिना झूठ बोले बताओ कि यह कौन-सा देश है। यहाँ किस तरह के लोग रहते हैं। यह द्वीप है या तट?"

युवक चरवाहे ने कहा, "महाशय,

लगता है, आपका लोक-ज्ञान शून्य है। कहीं आप किसी और देश के तो नहीं हैं? क्योंकि हमारा देश सुप्रसिद्ध है। इथाका देश के बारे में तो ट्रोय नगर के लोग बहुत-कुछ जानते है।"

रूपधर बड़ा ही चतुर है। जब उसे मालूम हुआ कि इथाका देश पहुँच गया हूँ, तब मन ही मन बहुत खुश हुआ। पर अपनी खुशी को छिपाते हुए उसने कहा "हाँ,हाँ, क्रीट द्वीपों में भी इस देश के बारे में कहते हुए सुना था। मैंने एक दुष्ट को मार डाला, जिस कारण से मुझे बचकर भाग आना पड़ा।" उसने यों चरवाहे को एक कपोल-कल्पित कहानी सुनायी।

पहुँच गये ।'' ''सचमुच यह मेरा ही इथाका है? मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा है । कहीं तुम मज़ाक तो नहीं कर रही हो ना?'' रूपधर ने पूछा ।

''तुम तो इतनी आसानी से विश्वास करनेवालों में से नहीं हो । कोई दूसरा होता तो इतने परिश्रम तथा लंबी अवधि के बाद जब देश पहुँचता तब तुरंत अपनी पत्नी व संतान के बारे में प्रश्न पर प्रश्न पूछता जाता । तुम तो मेरा भी विश्वास करने तैयार नहीं हो । यह भी एक प्रकार से अच्छा ही हुआ । तुम्हारी पत्नी दिन-रात तुम्हारी ही याद कर रही है । वह तुम्हारे लिए तड़प रही है । पहले तुम्हें अपना देश दिखाऊँगी । पहचानो ।'' कहती हुई बुद्धिमति ने अपनी महिमा से कोहरे को हटाया । रूपधर विविध स्थलों को देखते हुए उन्हें पहचान पाया । उसकी स्मृतियाँ ताज़ी होती गयीं । फिर बुद्धिमति ने गुफ़ा में प्रवेश किया और रूपधर की समस्त वस्तुओं को वहाँ रखवा दिया । गुफ़ा का द्वार एक पथ्थर से बंद कर दिया और फिर दोनों एक पेड़ के नीचे बैठकर बातें करने लगे ।

उसकी बातों के बीच में ही चरवाहा ग़ायब हो गया और उसकी जगह पर बुद्धिमति देवी प्रत्यक्ष हुई । वह हँसती हुई बोली ''तुमसे चालाक आदमी कोई है नहीं । गढ़ंत कथाएँ सुनाना तुम्हारे लिए बायें हाथ का खेल हैं । अपना देश पहुँच गये, पर तुम्हारी पुरानी आदत नहीं छूटी । मैं भी थोड़ी-बहुत होशियार हूँ । तेरी चालें मेरे पास चलेंगीं नहीं । अच्छा छोड़ो इन बातों को । असल में बात यह है कि जैसे भी हो, तुम्हें अपने देश में पहुँचाया, किन्तु इस भ्रम में न रहना कि तुम्हारे कष्ट समाप्त हो गये । इसलिए सावधानी बरतना । किसी को भी यह मालूम न हो कि तुम इथाका

''रूपधर, तीन सालों से कुछ दुष्ट बंधु तुम्हारे घर में आसन जमाये बैठे हैं । तुम्हारा ही खाना खा रहे हैं । तुम्हारी पत्नी को अपना बनाने का षड्यंत्र रच रहे हैं, उसे

सता रहे हैं। इन्हें सबक सिखाने की जिम्मेदारी तुम पर ही है। मेहमानों को खुश रखने के लिए उन्हें फुसलाती हुई तुम्हारी पत्नी बड़ी ही बेचैनी से तुम्हारी राह देख रही है।'' बुद्धिमति ने यों वस्तुस्थिति समझायी। तब रूपधर ने कहा ''माँ बुद्धिमति, तुम्हारी दया रही तो अवश्य उन दुष्टों का संहार करूँगा। कहो, मैं क्या करूं?''

''पहले मैं तुम्हारा रूप बदल दूँगी, जिससे कोई भी तुम्हें पहचान नहीं पायेंगा। ऐसा बदल दूँगी कि तुम्हारी पत्नी और तुम्हारा बेटा भी तुम्हें पहचान नहीं पायेगा। तुम अपने सुवरों के रखवाले के पास जाओ और उसी के यहाँ रहो। वह तुम्हारे सुवरों को कौओं के पहाड़ के पास चरा रहा है। इस बीच मैं तुम्हारे बेटे धीरमति को घर पहुँचाऊँगी। तुम्हारे बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए वह राराजा के पास गया हुआ है।'' बुद्धिमति ने कहा।

बाद उसने उसे वृद्ध के रूप में बदल दिया। उसका शरीर झर्रियों से भरा हुआ था। उसके बाल बिखरे हुए थे। उसने उसे एक लाठी और झोला दिया। उसने उसे कौओं के पहाड़ का पता बताया और अंतर्धान हो गयी।

रूपधर जंगलों और पहाड़ों को पार करता हुआ सुवरों के रखवाले के पास पहुँचा। उसके जितने भी नौकर हैं, उनमें से वही एक अति विश्वासपात्र है। उसने एक बड़े मैदान में एक घर बनाया। चारों ओर पथ्थरों से एक दीवार भी खड़ी की और उसपर नागफनी लगा दी, जिससे कोई आसानी से अंदर ना आ पाये। उसके संरक्षण में हज़ार सुवर थे। तब तक रूपधर के घर में बैठे दुष्टों ने बहुत-से सुवरों को मंगवाया और पकाकर खा लिया। इन सुवरों की रक्षा में चार शिकारी कुत्ते भी लगे हुए हैं।

रूपधर जब वहाँ पहुँचा तब उसने देखा कि वह रखवाला अपने लिए चप्पल सी रहा है। उसे देखते ही शिकारी कुत्ते उसपर पिल पड़े। सुवरों का रखवाला वहाँ आया

और पूछा "अरे बुड्ढे, अच्छा हुआ, बच गये। नहीं तो देखते-देखते कुत्ते तुम्हें नोच लेते। ऐसे तो मेरी भी हालत आजकल अच्छी नहीं है। मेरा भला यजमान अपने देश को छोड़कर दूसरे देशों में भटक रहा है। पता नहीं, उसपर क्या-क्या गुज़रता होगा। और यहाँ। यहाँ बेकार और निकम्मे लोगों की एक भीड़ घर में बैठी सुवरें खाती जा रही है। अंदर आना, थोड़ा-बहुत जो है, खा लेना और अपनी आप बीती सुनाना।"

रूपधर जब तक खाना खाता रहा, तब तक वह रखवाला अपने यजमान की तारीफ़ करता रहा। उसने अपना दुख प्रकट करते हुए कहा भी कि रराजा के साथ वह युद्ध करने ट्रोय गया और फिर मालूम नहीं हुआ कि कहाँ चला गया। उसकी पूरी बातें सुनने के बाद रूपधर ने कहा "अजी, अपने जिस यजमान के बारे में इतना बढ़ा-चढ़ाकर बता रहे हो, आख़िर वह है कौन? मैं तो बहुत से देशों में भटकता रहा किन्तु ऐसे आदमी से मैं नहीं मिला। फिर भी तुम और सविस्तार बता पाओगे तो शायद पहचान जाऊँ और उसके बारे में बता पाऊँ।"

सुवरों के रखवाले ने कहा "तुम कुछ भी बताओ, माँजी और बाबूजी तुम्हारी बातों का एतबार नहीं करेंगे। क्योंकि बहुत से लोगों ने झूठी बातें कहकर उन्हें धोखा दिया। कुछ पाने की उम्मीद में उन्होंने ढोंग रचा। शायद तुम भी ऐसे ही आदमियों में से हो।"

"कुछ पाने की उम्मीद में झूठ कहना नीचता है। मैं क़सम खाकर कहता हूँ। ध्यान से सुनो। तुम्हारा मालिक अमावास के पहले ही लौटकर आयेगा। उसके शत्रुओं का विनाश अवश्य ही उसी के हाथों ही होगा। अब मुझे कोई तोहफ़ा नहीं चाहिये। अगर मेरी बात सच निकली तो लूँगा।" रूपधर ने विश्वास-भरे स्वर में कहा।

"अरे पगले, वह कहाँ से आयेगा। कभी का वह मर चुका है। अगर तुम्हारी बातें सच निकलीं तो इससे बढ़कर उसकी पत्नी

और उसके बेटे को और क्या चाहिये। उसका बेटा भी अपने पिता की ही तरह बड़ा और दृढ़काय हो गया है। उसकी सुँदरता का जितना भी वर्णन करूँ, कम है।'' रखवाले ने कहा।

दोनों बहुत देर तक बातें करते रहे। रूपधर ने अपने बारे में बताते हुए कहा ''मैं क्रीट देश का हूँ। ट्रोय युद्ध में मैंने भी भाग लिया था। रूपधर को जानता हूँ। जब मैं भ्रमण कर रहा था तब किसी दूसरे देश में भी मैंने रूपधर को देखा था।'' पर सुवरों के रखवाले ने उनका विश्वास करने से साफ़ इनकार किया।

अंधेरा होते-होते रखवाले के नौकर सुवरों सहित लौटे। उसने उस रात को अपने मेहमान के लिए स्वादिष्ट भोजन स्वयं बनाया।

बाहर बारिश होने लगी। ज़ोर की हवा भी चलने लगी। रूपधर ने उस रखवाले से कहा ''जानते हो, ट्रोय युद्ध में एक बार क्या हुआ? एक दिन हम ट्रोय की दीवारों के पीछे की झाडियों में लेटे हुए थे। उस दिन भी आज की ही तरह कड़ाके की सर्दी थी, बरफ़ गिर रही थी। मेरे पास ढकने के लिए चादर नहीं थी। आधी रात को मैंने रूपधर को जगाया और अपनी दुस्थिति बतायी। उसने तब एक उपाय सोचा। उसने साथियों से कहा ''मैंने एक बुरा सपना देखा। कोई राराजा के पास जाए और कुछ और सिपाहियों को ले आवे।'' फ़ौरन एक आदमी उठ खड़ा हुआ और अपनी चादर वहाँ फेंककर राराजा से यह बात बताने के लिए निकल पड़ा। मैंने उस चादर को ओढ़ लिया और रात गुज़ारी।''

''बुड्ढे, अच्छी कहानी सुनायी। आज रात को ढकने के लिए तुम्हें चादर दे दूँगा। ड़रो मत'' रखवाले ने हँसते हुए कहा।

उसने चमड़ों का एक बिछौना बिछाया और रूपधर को वहाँ सुलाया। उसपर कंबल भी ओढ़ दिया। रूपधर आराम से सो गया।

(सशेष)

'चन्दामामा' की ख़बरें

सुनिये, पढ़िये मत

तकनीकी विज्ञान के विकास के साथ-साथ विविध क्षेत्रों में शीघ्र ही अभिवृद्धि हो पा रही है। एलक्ट्रानिक युग में ख़ासकर मुद्रण क्षेत्र में अद्भुत प्रगति हुई है। मुख्य पुस्तकों को मैक्रो फिल्मों में सुरक्षित किया जा रहा है। इन पुस्तकों के पन्नों को हम पढ़ना चाहें तो कम्प्यूटर के परदे पर पढ़ सकते हैं। पुस्तकों का पठन बीती बात हो गयी। अब तो वह समय आ गया कि गीतों की तरह इन्हें कासेटों में सुन सकते हैं। कुछ आकाशवाणी के केंद्र तो उन-उन रचयिताओं के कंठस्वर में ही उनसे लिखित रचनाओं को सुनाने का प्रयास कर रहे हैं। हाल ही में सुप्रसिद्ध मलयालम के रचयिता सी.राधाकृष्णन का उपन्यास आडियों कासेट के रूप में प्रकाशित हुआ। आकाशवाणी के एक कलाकार ने अपने स्वर में इसे सुनाया।

नीलाम में ग़ैर हाज़िर पुस्तक-चोर

इंग्लैण्ड के सफ़ोक प्रदेश के डंकन जेवोन्स नामक युवक को धर्म-संबंधी साहित्य से बड़ा लगाव है। इससे संबंधित पुस्तकों के समीकरण में उसकी बड़ी आसक्ति है। चूँकि इतनी पुस्तकों को खरीदने की शक्ति वह नहीं रखता, इसलिए उसने उनकी चोरी करने का एक आसान तरीका निकाला। उन्नीसवीं उम्र से लेकर तीस सालों में उसने ५२,०० पुस्तकों को इकट्ठा किया। किन्तु एक दिन वह कारलैल नगर में चोरी करते हुए पकड़ा गया। तब उसका भंडा फूट गया। उससे पुलिस ने १२,००० पुस्तकें छीनीं और उन्हें नीलाम में बेच दीं। किन्तु बेचारा डंकन जेवोन्स उस नीलाम में भाग नहीं ले सका। जब इस युवक की अजीब कहानी सुनते हैं तब अमेरीका के हास्य-रचयिता मार्क ट्वैन के एक व्यंग्य की याद आती है। एक बार एक अतिथि उनके घर आया। वहाँ पुस्तकें तितर-बितर पड़ी हुई थीं। अतिथि ने कहा "ये पुस्तकें अलमारी में सुरक्षित रख सकते थे।" मार्क ट्वैन ने उत्तर में कहा "अच्छा ही होता, किन्तु अलमारी तो कोई कर्ज़ में नहीं देंगे ना?"

जन्म-दिन पर भेंट

अमेरीका के अध्यक्ष बिल क्लिंटन - हिल्लरी क्लिंटन की पुत्री चेल्पी की आयु है, सोलह साल। उसके जन्म-दिन पर अमेरीका की तीन निजी रेडियो संस्थाओं ने तीन नमूनों की तीन मोटरकारें भेजीं। उस समय चेल्पी घर पर नहीं थी। स्कूल गयी हुई थी। स्कूल से लौटने के बाद उसने और उसके माता-पिता ने गाड़ियाँ वापस भेज दीं। उस दिन शाम को उसके माता-पिता प्रतिष्ठित नेशनल-थियेटर में प्रदर्शित होते हुए सुप्रसिद्ध फ्रेंच रचयिता विक्टर ह्योगो के 'ले मिज़रबुल्स' उसे दिखाने ले गये। सोलह मोमबत्तियाँ जलाकर यद्यपि चेल्पी ने अपना जन्म-दिन नहीं मनाया, पर उसे बहुत ही आनंद हुआ।

विकृतघ्न

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधों पर ड़ाल लिया। मौन धारण किये श्मशान की ओर अग्रसर होने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, मैं कितना भी सोचूँ, मेरी यह शंका दूर नहीं हो रही है कि तुम इतना परिश्रम अपने स्वार्थ के लिए कर रहे हो अथवा किसी और की इच्छा की पूर्ति के लिए। सामान्यों की इच्छाओं की पूर्ति तो तुम्हारे लिए बायें हाथ का खेल है। इसके लिए तुम्हें इतने कष्ट उठाने की आवश्यकता भी नहीं। अब रही पंडितों की बात। उनमें से कुछ पंडित ऐसे होते हैं, जो अपनी भाषा-पटिमा पर वाहवाही सुनने की आकांक्षा रखते हैं। अर्थहीन किसी शब्द की सृष्टि करके वे लोगों को परेशानी में ड़ाल देते हैं। ऐसे किसी पंडित ने क्या

बैताल कथा

तुम्हें अपने चमत्कारी पदजाल में फँसाकर कहीं इन कष्टों में ड़ाल तो नहीं दिया ? सचमुच अगर इन्हीं प्रयासों में तुम रत हो तो अवश्य ही तुम्हारी ज़गहँसाई होगी । उदाहरणस्वरूप मैं तुम्हें रामशास्त्री और अनुपमा की कहानी सुनाऊँगा, जिसे अपनी थकावट दूर करते हुए सुनते जाओ।'' यों कहकर बेताल उनकी कहानी यों सुनाने लगा ।

रामशास्त्री ने बचपन में ही कितने ही शास्त्रों का पठन किया, मनन किया और पंडित कहलाया जाने लगा । उसकी अभिलाषा थी कि इस क्षेत्र में उससे कोई बड़ा ना हो । एक बार, उसके पिता का एक बाल्य मित्र उसके घर आया । पांडित्य में उसका भी थोड़ा-बहुत प्रवेश था । उसने रामशास्त्री से कुछ सवाल किये और उनके समाधान सुनने के बाद उससे कहा ''तुम तो इतनी छोटी उम्र में ही पंडित बन गये । यह तो बड़ा भाग्य है, किन्तु महापंडित बनना चाहते हो तो याद रखो, अवगाहन मात्र पर्याप्त नहीं है । तुम्हें स्वयं नये-नये शब्दों की सष्टि करनी होगी और उनका प्रचार भी करना होगा ।

''क्या कोई ऐसा है, जो ऐसा कर पा रहा हैं?'' रामशास्त्री ने पूछा । ''क्यों नहीं । मेरे ही गॉव में कृष्णशास्त्री नामक एक व्यक्ति हैं । किसी भी नये शब्द का अर्थ बड़ी ही आसानी से बता देते हैं किन्तु उनसे सृजित किसी नये शब्द का अर्थ दूसरे बता नहीं पाते ।'' आगंतुक ने कहा ।

''तब तो मैं कृष्णशास्त्री से अवश्य ही मिलूँगा और अपने पांडित्य की भी परीक्षा दूँगा ।'' रामशास्त्री ने कहा ।

कृष्णशास्त्री की अनुपमा नामक एक सुँदर बेटी है । पांडित्य के बहाने वह जिज्ञासु युवकों को अपने घर में ही रखता है । वह चाहता है कि ऐसे युवक अनुपमा के साथ रहें तो वे एक-दूसरे से भली भांति परिचित हो जाएँगे और हो सकता है कि दोनों एक-दूसरे को चाहने भी लगें । तब उनकी शादी में कोई कठिनाई नहीं होगी । इसी कारण

रामशास्त्री को अपने घर पर ही रहने को कहा और उसकी देखभाल का भार अपनी पुत्री को सौंपा ।

किन्तु रामशास्त्री की दृष्टि पांडित्य पर ही केंद्रित है । अनुपमा की सेवाओं पर उसने ध्यान ही नहीं दिया । उसने इतना भी नहीं सोचा कि एक सुँदरी उसकी सेवाओं में लगी हुई है । अपनी ज़रूरतें पूरी करने के लिए वह उसे आदेश दिया करता था । उस रात को विश्राम लेने के बाद दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह कृष्णशास्त्री से मिलने छटपटाने लगा । अनुपमा से उसने जाना कि कृष्णशास्त्री कहीं बाहर गये हुए हैं और उनके लौटने में दो दिन लगेंगे ।

वह चिढ़ता हुआ अनुपमा से बोला "उन्हें देखे बिना मैं दो दिन कैसे गुजारूँ? यहाँ तो हर क्षण एक युग की तरह बिता रहा हूँ ।"

"इतना चिढ़ते क्यों हो? दो दिनों का यह समय तुम्हारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण प्रमाणित होगा । उनसे सृजित नये शब्दों की तुम जानकारी पा सकते हो ।" अनुपमा ने कहा ।

"किसी भी शब्द का अर्थ जान पाना मेरे लिए कोई बड़ी बात नहीं । मैं कई ऐसे नये शब्दों का उपयोग भी कर सकता हूँ, जिनका उपयोग अब तक उन्होंने नहीं किया होगा । ऐसे शब्दों की कल्पना भी तुम्हारे पिता नहीं कर सकते ।" रामशास्त्री ने अपना बडप्पन जताते हुए कहा ।

इसपर अनुपमा हँस पड़ी और बोली "तब इन दोनों दिनों में हम कई बातें करते रहेंगे और मनोरंजन कर लेंगे । तुम बड़े ही पंडित हो । तुमसे बातें करते रहने की तीव्र इच्छा हो रही है ।"

"पंडित, पंडित से ही बातें करने उत्सुक होगा । दूसरों से बातें करने में उसे मज़ा नहीं आता । तुम तो केवल मेरी सेवा करने के योग्य हो, बातें करने की नहीं ।" रामशास्त्री ने गर्व-भरे स्वर में कह दिया ।

"तुम जैसे व्यक्ति के लिए ही विकृतघ्न शब्द की उत्पत्ति हुई होगी" कहती हुई

वह वहाँ से चली गयी।

रामशास्त्री को लगा कि विकृतघ्न शब्द उसके लिए बिल्कुल ही नया है। वह बार-बार सोचने लगा कि इस शब्द का अर्थ क्या हो सकता है। जब उसकी समझ में नहीं आया तो उसने अनुपमा को बुलाया और उससे कहा "अभी-अभी तुमने मुझे कृतघ्न कहने के बदले विकृतघ्न कह दिया। अशिक्षित लोग ही ऐसे अटपटे शब्दों का उपयोग करते हैं। पहले यह बताना कि मैं कृतघ्न कैसे हो गया?" एक-दो क्षण रुककर अनुपमा ने कहा "जैसे ही तुम मेरे घर आये, मैं तुम्हारी सेवाओं में लग गयी। वैसे तो तुम सुंदर नहीं हो, फिर भी मैंने तुम्हारी सुंदरता की भरपूर प्रशंसा की। कृतज्ञता के रूप में तुमने मुझे दिया ही क्या? सेवाएँ तो करा लीं, पर मेरी सुंदरता की प्रशंसा में एक भी शब्द नहीं कहा। तुमने तो कह भी दिया कि मैं केवल सेवाएँ पहुँचाने के योग्य मात्र हूँ। तुमने मेरा अपमान किया। मुझसे की गयी सेवाओं पर तुमने ध्यान ही नहीं दिया। ऐसा करके तुमने मेरा अनादर किया। तुम विकृतघ्न हो।"

"देखो, फिर से तुम मुझे विकृतघ्न कह रही हो। जहाँ तक मैं जानता हूँ, ऐसा कोई शब्द है ही नहीं। की गयी भलाई को भुला देनेवाले को कृतघ्न कहना चाहिये" रामशास्त्री ने कहा।

"तुम्हें कृतघ्न कहना काफ़ी नहीं होगा। चित्र को विचित्र कहते हैं। जय को विजय भी कहते हैं। इसी तरह कृष्णशास्त्रीजी ने तुम्हारे जैसे व्यक्ति के लिए विकृतघ्न जैसे शब्द की उत्पत्ति की है।" अनुपमा ने कहा।

रामशास्त्री अब उस शब्द का अर्थ समझने के लिए गंभीर रूप से सोचने लगा। क्योंकि इस शब्द की सृष्टि स्वयं कृष्णशास्त्री ने की थी। बहुत सोचा, लेकिन वह समझ नहीं पाया कि इस शब्द का क्या अर्थ है। लाचार होकर उसने अनुपमा से पूछा कि इस शब्द का क्या अर्थ है।

"अपने को महापंडित कहते हो। दावा करते हो। इतना भी नहीं जानते कि इस शब्द का उपयोग मैंने तुम्हीं पर किया। उपनिषद बताते हैं कि महान से महान पंडित भी अपने बारे में नहीं जानते। इसलिए मुझे तुम्हें विरूप के बारे में बताना ही होगा। उसी को दृष्टि में रखकर मेरे पिताजी ने इस शब्द का प्रयोग किया।" फिर अनुपमा ने यों कहा।

विरूप इस गाँव में ग़रीब किसान है। एक बार जब खेत सस्ते में बिक रहा था तो खरीदना चाहा। पर पैसे नहीं थे। बग़ल के राम ने पैसे देकर उसकी मदद की। इसके कुछ दिनों बाद विरूप के खेत में निधि मिली तुरंत राम का कर्ज़ा चुका दिया। तभी राम की बेटी की शादी तय हुई। राम ने विरूप से थोड़ा-सा कर्ज़ माँगा।

विरूप ने 'ना' कहते हुए कहा "ग़रीबों को कर्ज़ देना नहीं चाहिये। ग़रीबों को चाहिये कि जितना है, उतने ही में रहना सीखें। इसी में उनकी भलाई है।"

एक बार जब विरूप खेत में काम पर लगा था, तब साँप ने उसे डस लिया। बग़ल के खेत में काम पर लगे श्याम ने यह देखकर उसे फ़ौरन अपने कंधे पर उठा लिया और मांत्रिक के पास ले गया। मांत्रिक ने कहा कि थोड़ी देर और हो जाती तो वह मर गया होता। दूसरे ही दिन घर

के पिछवाड़े में श्याम को साँप ने डस लिया। उस समय विरूप उधर से गुज़र रहा था। उसे यह बात मालूम हुई। उसने तब कहा कि श्याम को उठाकर ले जाने की ताक़त मुझमें नहीं है। किसी ने उससे कहा कि कम से कम मांत्रिक को यह बात बता दो, तो उसने कहा "मैं किसी ज़रूरी काम पर दक्षिणी दिशा में जा रहा हूँ और मांत्रिक का घर है उत्तरी दिशा में। भला यह कैसे संभव होगा ?" मांत्रिक को किसी के बताने पर यह बात मालूम हुई और वह दौड़ा-दौड़ा वहाँ आया। उसने उसकी जान बचायी।

विरूप के बारे में इन दोनों घटनाओं
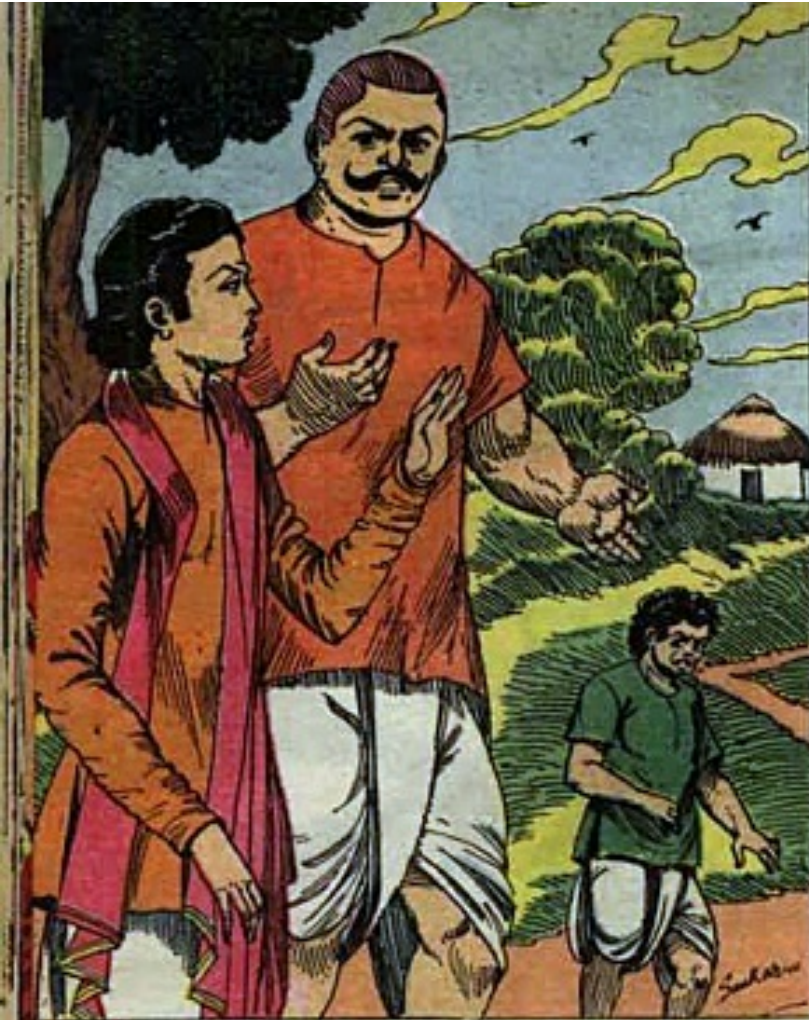
को सुनने के बाद रामशास्त्री ने कहा कि नित्संदेह ही विरूप जैसे व्यक्ति के लिए ही कृतघ्न शब्द समुचित है ।

अनुपमा ने कहा "कृतघ्न नहीं, विकृतघ्न ।" "विकृतघ्न का कोई मतलब ही नहीं । की गयी मदद को भुलाना कृतघ्नता है । इसमें अपने-पराये का कोई फ़रक नहीं होता । सब कृतघ्न एक समान होते हैं ।" रामशास्त्री ने अपना तर्क प्रस्तुत किया ।

अनुपमा ने कहा "मेरे बताने से बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी । तुम खुद जाओ और विरूप से मिलकर आओ ।"

रामशास्त्री गाँव में गया । वह लोगों से पूछकर जानना चाहता था कि विरूप का घर कहाँ है कि इतने में उसने देखा कि दो आदमी आपस में झगड़ा कर रहे हैं । उनमें से एक आदमी छे फुट का है । देखने में पहलवान लगता है । दूसरा नाटा और पतला है । पहलवान नाटे को मारने पर तुला है, लेकिन कोई भी उसे रोकने की कोशिश नहीं कर रहा है ।

तब रामशास्त्री ने हस्तक्षेप करते हुए उनसे पूछा कि झगडे का कारण क्या है?

पहलवान ने रामशास्त्री से कहा "महाशय, जब यह नदी में बहा जा रहा था तब गाँव के किसी भी आदमी ने इसे नहीं बचाया । जान पर खेलकर मैंने इसे बचाया । दो दिन पहले यह घटना घटी । आज रास्ते में दिखाई पड़ा तो मैंने पूछा कि तुम्हारी तबीयत कैसी है ? मुझे गुर्राता हुआ देखा और पूछा कि तुम कौन हो ? मैंने याद दिलायी । यह तो कहने लगा कि ऐसी कोई बात ही नहीं हुई । हुई भी हो तो मुझे याद नहीं । मैंने इससे थोड़े ही उधार माँगा? उल्टे यह मेरी खिल्ली उड़ाता हुआ बोलने लगा "कहते हैं कि बल से बलवान की मति भ्रष्ट होती है । तुम इसके जीते-जागते उदाहरण हो । तुम निरे बुद्धिहीन हो ।"

स्थिति रामशास्त्री की समझ में आ गयी । उसने अंदाजा भी लगा लिया कि यह नाटा

ही विरूप होगा। उसने पहलवान से कहा "भाई साहब, आपमें बुद्धिबल और शारीरिक बल भी हैं। इन्हें ऐसे आदमियों पर प्रयोग करके व्यर्थ मत कीजिये।" पहलवान ने विरूप को छोड़ दिया और चला गया। तब रामशास्त्री ने पूछा "तुम विरूप हो ना?" "मुझे नहीं मालूम कि तुम मुझसे क्या चाहते हो? लगता है कि तुम जान गये कि मैं कौन हूं। मैं नहीं जानता कि तुम कौन हो और जानना भी नहीं चाहता।" कहता हुआ विरूप वहाँ से चला गया। लंबी सांस खींचता हुआ रामशास्त्री घर लौटा।

अनुपमा ने पूछा कि विरूप से मिले?

उसने अनुपमा को सविस्तार बताते हुए कहा "विरूप को गाली देने के लिए कृतघ्न शब्द पर्याप्त नहीं है, इसीलिए कृष्णशास्त्रीजी ने विकृतघ्न शब्द की सृष्टि की होगी। इस शब्द से उसके प्रति जो हेय भाव है, वह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस शब्द में भारीपन है और यह बिल्कुल सही लगता है।"

"शब्द के आडंबर और भारीपन के बारे में तो जान गये लेकिन लगता है कि उस शब्द का अर्थ अभी तक समझ नहीं पाये।" अनुपमा ने हँसते हुए कहा।

तभी वहाँ आये अनुपमा के पिता ने रामशास्त्री से कहा "अब तो समझ में आ गया होगा कि पांडित्य में तुम अनुपमा की बराबरी के नहीं हो। क्योंकि कृष्णशास्त्री नामक कोई व्यक्ति है ही नहीं। मैंने, तुम्हें और अनुपमा को निकट लाने के लिए कृष्णशास्त्री का सृजन किया।"
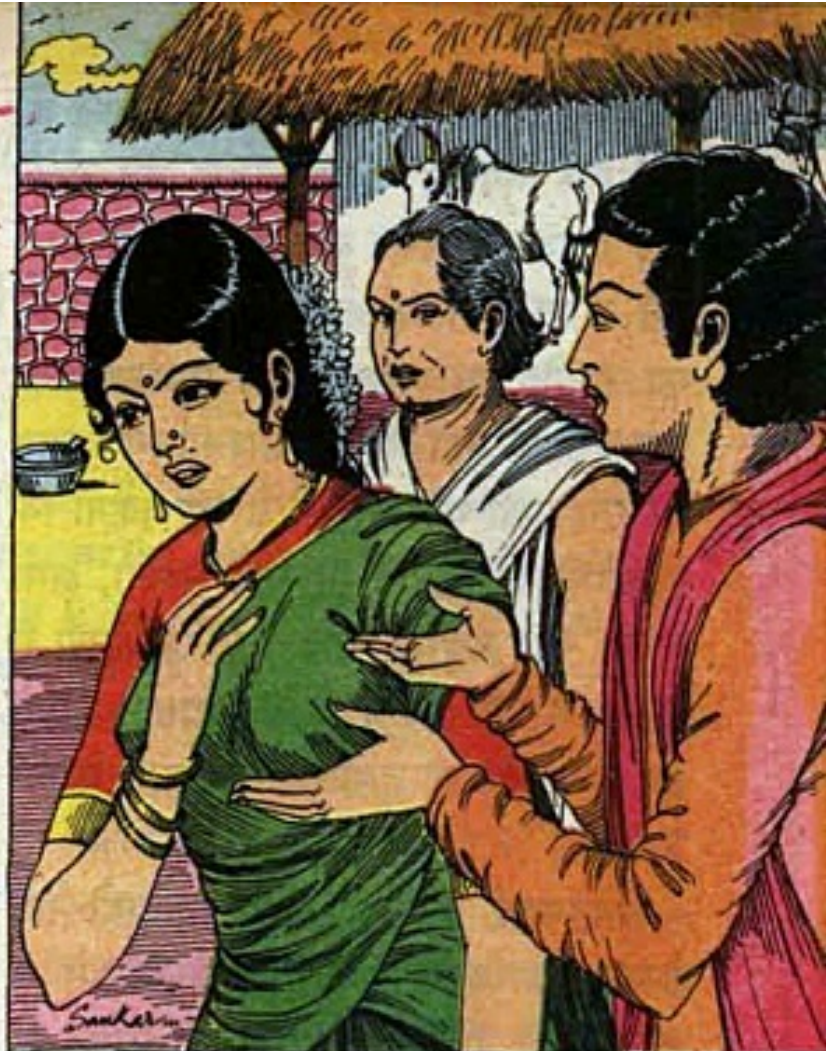
उसकी बातें सुनकर रामशात्री सन्नाटे में आ गया। थोड़ी देर बाद अपने को संभालते हुए उसने अनुपमा से कहा "विकृतघ्न शब्द मुझसे सहा नहीं जाता। मुझे क्षमा करो।"

बेताल ने कहानी सुनाने के बाद अपने संदेह व्यक्त करते हुए विक्रमार्क से पूछा "राजन्, किसी भी भाषा के लिए व्याकरण-सूत्र तथा नियम-निबंधन होते हैं, जिनका अतिक्रमण करना मना है। पंडित न होते

हुए भी अपने पांडित्य पर गर्व करनेवाले को क्या हम विपंडित या विपांडित्य कह सकते हैं। रामशास्त्री अपने बचपन में पंडित था। ऐसे पंडित के लिए अर्थहीन विकृतघ्न शब्द का उपयोग करके अनुपमा ने रामशास्त्री को क्या परेशान नहीं किया? आश्चर्यजनक बात तो रामशास्त्री का अनुपमा से यह कहना कि विकृतघ्न का नाम मैं सह नहीं सकता, क्षमा करो। क्या अनुपमा पांडित्य में रामशास्त्री से बढ़कर है? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी न देगे तो तुम्हारा सिर टुकडों में फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''यह सवाल ही नहीं उठता कि अनुपमा और रामशास्त्री में से कौन बड़ा पंडित है। रामशास्त्री पंडित है, सुंदर है, इसीलिए अनुपमा ने उसकी सेवा की। पर उसने उसकी उपेक्षा की और सदा यह जानने के प्रयत्न में जुटा रहा कि कृष्णशास्त्री और उसमें से कौन बडा पंडित है। वह उससे चिढ़ता रहा, उसकी परवाह ही नहीं की। अनुपमा को यह ताड़ने में कठिनाई नहीं हुई कि रामशास्त्री शास्त्रों में पंडित तो है, पर उसमें लोकज्ञान शून्य है। इसीलिए उसने एक निर्णीत योजना के अनुसार उसे विरूप से मिलने भेजा। विरूप की कृतघ्नता-प्रवृत्ति से परिचित होते हुए भी रामशास्त्री अपनी त्रुटि समझ नहीं पाया। अनुपमा की दृष्टि में कृतघ्न वह है, जो कुछ समय तक यह भूल जाता है कि उसके साथ क्या भलाई की गयी। विकृतघ्न वह है, जो दूसरे ही क्षण भुला देता है। इसीलिए ऐसे एक नये शब्द का प्रयोग उसने रामशास्त्री पर किया। उसने स्पष्ट किया कि कृष्णशास्त्री नामक कोई पंडित है नहीं और वह यहाँ क्यों बुलाया गया। तब रामशास्त्री की समझ में आया कि अनुपमा के प्रति उसका व्यवहार कृतज्ञताहीन था तब उसने उससे क्षमा माँगी।''

इस प्रकार बेताल राजा के मौन-भंग में सफल हुआ। वह शव सहित ग़ायब हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

आधार - रमा कुमारी

जंज़ीरा से गोवा

आलेख : मीरा नायर चित्र : गौतम सेन

जंजीरा के दक्षिण में सावित्री नदी के मुहाने पर बसा है *हरिहरेश्वर* तीर्थ. उसे देवगढ़ भी कहते हैं. समुद्रतट पर बने यहां के कई मंदिरों में से एक है कालभैरव का मंदिर. मान्यता है कि मंदिर के शिवलिंग स्वयंभू हैं. साल में एक बार कालभैरव की प्रतिमा पालकी में रख कर पास की पहाड़ियों पर ले जायी जाती है. पहाड़ियों के नाम ब्रह्मा, विष्णु, महेश और पार्वती पर रखे गये हैं.

हरिहरेश्वर के दक्षिण में *बाणकोट* का किला है. अठारहवीं सदी में मराठा नौसेनापति कान्होजी आंग्रे यहीं से समुद्री यात्राओं और युद्धों पर निकला करते थे. १७५६ में मराठा शासकों ने बाणकोट अंग्रेजों को दे कर रत्नागिरी के दक्षिण में घेरिया का किला उनसे लिया. इस प्रकार बाणकोट पश्चिम भारत की मुख्यभूमि पर अंग्रेजों का पहला इलाका था. शिवाजी ने घेरिया दुर्ग का नाम बदल कर *विजयदुर्ग* कर दिया.

हरिहरेश्वर

सुप्रसिद्ध मराठा राजनीतिज्ञ नाना फडनवीस का जन्म बाणकोट से कुछ दूर दक्षिण में वेला में हुआ था.

नाना फडनवीस

कान्होजी आंग्रे

इस इलाके में पुराने जमाने में एक अन्य महत्वपूर्ण बंदरगाह था ***परिपाटना*** या ***पालैपाट्मे***, जो कई सदियों तक समुद्री व्यापार का केंद्र था. यह बाणकोट के दक्षिण में स्थित था और ईसा की चौदहवीं शताब्दी तक दक्षिण कोंकण क्षेत्र का प्रमुख बंदरगाह था. यहां से इराक की खाड़ी और भूमध्यसागर के देशों के साथ खूब व्यापार होता था. बाद में इसका नाम बदल कर दाभिया नामक देवता के नाम पर **दाभोल** रख दिया गया. दाभिया देव को वन में बिचरनेवाला देवता माना जाता है. दाभोल में दो प्राचीन स्मारक हैं. एक है सदियों पुरानी मसजिद और दूसरा, जमीन की सतह से नीचे बना चंद्रिकाबू मंदिर. मस्जिद विशुद्ध सरासीनी ढर्रे पर बना है और दक्षिण कोंकण में इस शैली का एकमात्र नमूना है. मंदिर सन ५५० से ५७८ के बीच बनाया गया था.

आजकल एक अमरीकी कंपनी एनरॉन की बहुत चर्चा है. वह कंपनी दाभोल में ताप-ऊर्जा संयंत्र लगा रही है. उससे महाराष्ट्र राज्य को ज्यादा बिजली मिलेगी.

कुछ और दूर दक्षिण में चलें तो हम ***गणपतिपुले*** पहुंचेंगे. कोंकणतट का यह कस्बा बहुत रमणीक है. यहां काजू, नारियल, आम और झाऊ के पेड़ बहुतायत से मिलते हैं. कस्बे का नाम उसके गणपति मंदिर के कारण पड़ा है. कहा जाता है कि मंदिर की गणेश मूर्ति ४०० वर्ष पूर्व एक पहाड़ी के नीचे स्वयं प्रकट हुई थी.

बाल गंगाधर तिलक
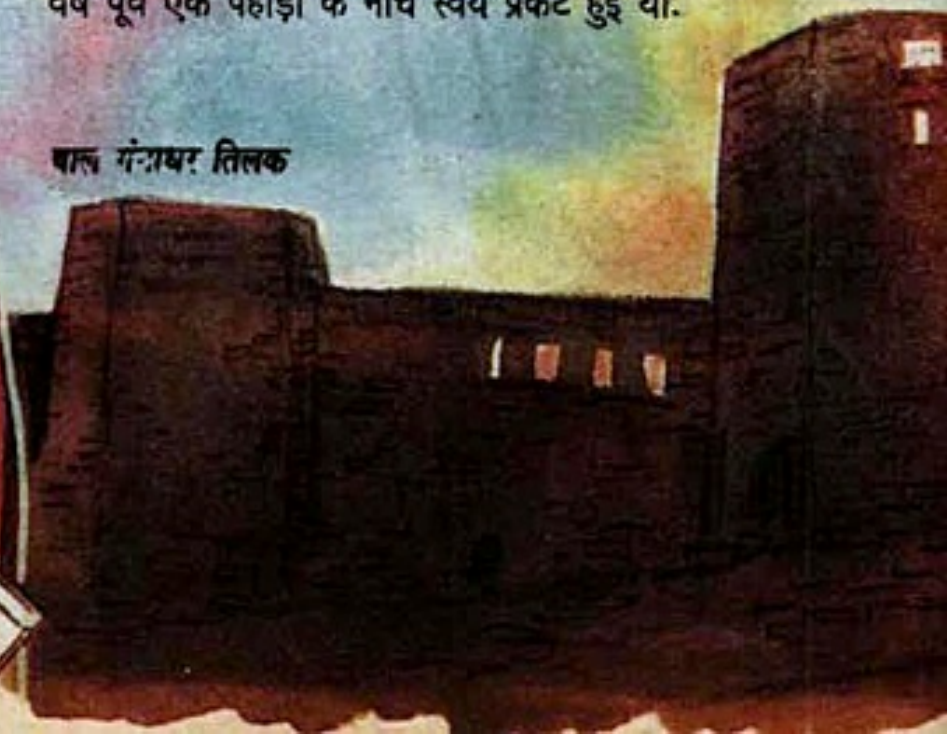
गणपति मंदिर में दूर-दूर से दर्शनार्थी आते हैं, खास कर अंगराकी चतुर्थी के पर्व पर. उस रोज भक्त दिन-भर व्रत रखते हैं और संध्या-समय चंद्रमा देख कर, गणेशजी को मोदक का भोग लगा कर व्रत तोड़ते हैं. मोदक चावल के आटे, नारियल और गुड़ से बनायी जानेवाली एक मिठाई है.

पूरे कोंकण तट में कोकम नाम के खट्टे बैंगनी फल के पेड़ जगह-जगह मिलते हैं. इस फल से खटमिट्ठा शरबत बनाया जाता है, जिसका रंग बड़ा सुहावना होता है. शरबत बनाने के बाद निचुड़े हुए फल को नमक लगा कर दस दिन तक धूप में सुखाते हैं. इमली की तरह इसका उपयोग दाल व सब्जी में खटास के लिए किया जाता है.

यों तो हमारे पूरे देश में आम लगते हैं. लेकिन *रत्नागिरी* के अल्फांज़ो आम की बात ही और है ! स्थानीय लोग उसे आपुसे या हापुस कहते हैं. रत्नागिरी बंदरगाह यों तो छोटा ही है, लेकिन अल्फांज़ो आमों और लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का जन्मस्थान होने के कारण काफी जाना-माना है. जिस घर में २३ जुलाई १८५६ को लोकमान्य तिलक का जन्म हुआ था, वह स्मारक के रूप में सुरक्षित है.

आमों का राजा अल्फांज़ो

रत्नागिरी से थोड़ी दूर दक्षिण में विजयदुर्ग नाम का समुद्री किला है. सिंधुदुर्ग और विजयदुर्ग मराठा नौसेना के मुख्य केंद्र थे. तुम पहले ही पढ़ चुके हो कि विजयदुर्ग का नाम पहले घेरिया था. उसकी पश्चिमी दीवार लगातार समुद्री लहरों के थपेड़े झेलने के कारण कुछ टूट-फूट गयी है. बाकी किला काफी अच्छी हालत में है.

विजयदुर्ग

दक्षिण में कुछ किलोमीटर और आगे बढ़ने पर हम *मालवण* पहुंचेंगे. कभी वह एक प्रसिद्ध बंदरगाह था; लेकिन अब नमक उत्पादन और अपनी खास पाककला के लिए ज्यादा जाना जाता है. नारियल के दूध में पकी शोरबेवाली मछली और कोकम से बनायी गयी सोल कढ़ी के बिना मालवणी भोजन अधूरा समझा जाता है. यों इस क्षेत्र का सबसे लोकप्रिय व्यंजन है – वडे-सागुती. 'वडे' कहते हैं चावल के आटे से बनी पूरी को, और 'सागुती' मिर्च-मसालेदार रसेदार गोश्त को.

वडे-सागुती

मालवण के समुद्रतट से जरा दूर पर शिवाजी का एक और समुद्री किला है. कहते हैं कि इसे शिवाजी ने अपने हाथों से बनाया था. इसका नाम है – सिंधुदुर्ग. यहां शिवाजी का एक मंदिर भी है. यह पूरे देश में छत्रपति शिवाजी का एकमात्र मंदिर है. इसमें काले पत्थर की बनी शिवाजी की मूर्ति स्थापित है, जिसके सिर पर चांदी का पत्तर चढ़ा है. विशेष अवसरों पर चांदी का पत्तर हटा कर सोने का पत्तर चढ़ा दिया जाता है. मंदिर के पास ही एक छतरी के नीचे चूने के पत्थर की सिल्ली पर शिवाजी की हथेलियों और पांवों की छाप सुरक्षित है.

महाराष्ट्र के समुद्रतट के एकदम दक्षिणी छोर पर है *वेंगुर्ला*. यह गोवा के काफी पास है. पहले यह व्यापार की बड़ी मंडी थी. यहां से नारियल, टाट, गुड़ की चाशनी और काजू का खूब निर्यात होता था. कोंकण तट के आस-पास समुद्री डाकू काफी लूट-पाट मचाते थे. १६६४ और १८१२ के बीच वेंगुर्ला को भी समुद्री डाकुओं ने बहुत बार लूटा. मराठा और मुगल सेनाओं ने दो बार शहर में आग लगा कर उसे राख कर दिया.

वेंगुर्ला में छोटी-छोटी पहाड़ियां और लंबे-लंबे रेतीले तट हैं. काजू, नारियल, कटहल और आम यहां की मुख्य पैदावार है. यहां के श्री देवी सातेरी और रामेश्वर के मंदिर बहुत प्रसिद्ध हैं.

शिवाजी की प्रतिमा

सिंधुदुर्ग
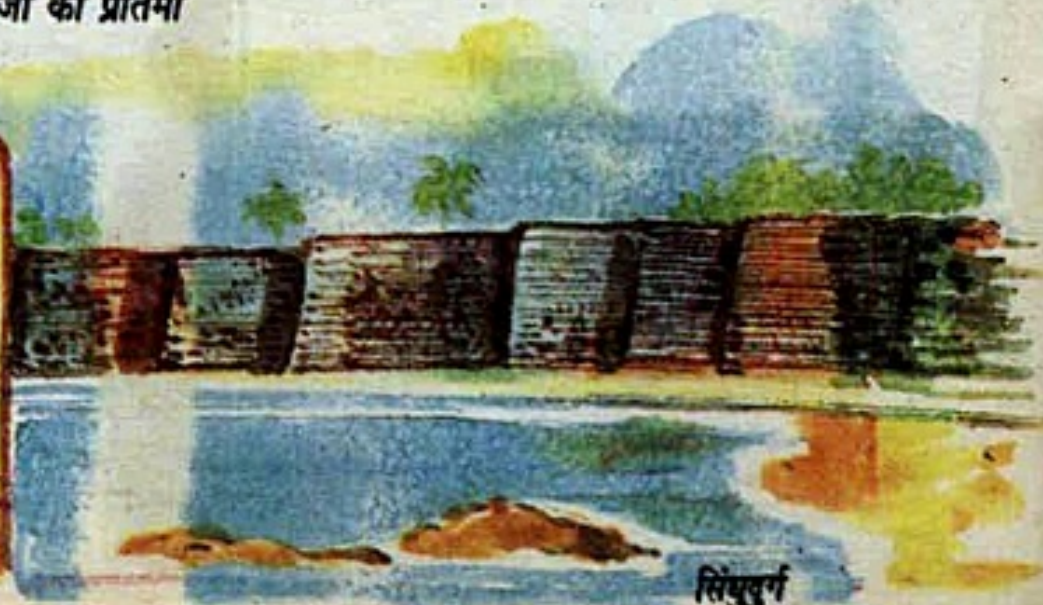
वृत्ति-प्रवृत्ति

प्रतापवर्मा के आस्थान में विविध क्षेत्रों में निष्णात व्यक्ति उपस्थित थे। उनमें से वैद्य धन्वंतरी एक था, जो किसी भी बीमारी की चिकित्सा बड़ी ही आसानी से करता था। राजा और राजपरिवार के सदस्य उसकी काफ़ी इज़्ज़त करते थे। बहुत बार उसने, उनसे क़ीमती भेंटें भी पायीं। इसी तरह रामशर्मा नामक एक आशुकवि भी था, जो अपनी कविताओं के द्वारा लोगों का मनोरंजन करता था। उनसे उसका पांडित्य- प्रदर्शन भी होता था।

एक बार पड़ोसी राज्य से कवियों का एक समूह अचानक रामगिरि आया। वे राजा प्रतापवर्मा से मिलने आस्थान आये। अनारोग्य के कारण रामशर्मा उस दिन अनुपस्थित था। राजा प्रतापवर्मा को कवि-सम्मेलनों में बड़ी ही अभिरुचि थी।

ठीक समय पर रामशर्मा की ग़ैरहाज़िरी ने राजा को निराश कर दिया। पड़ोस के राज्य के कवियों ने अपना-अपना कविता-चमत्कार राजा को सुनाया और कहा "महाराज, आपके आस्थान के कवि रामशर्मा की प्रतिभा के बारे में हमने सुना है। मालूम हुआ कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं है। उनका कोई वारिस आस्थान में अवश्य होगा। उनकी कविता सुनने का सौभाग्य हमें प्रदान कीजियेगा।"

राजा के आदेश के अनुसार दो-तीन कवियों ने अपनी कविताएँ सुनायीं। किन्तु उनकी कविता प्रतापवर्मा को ही प्रभावित नहीं कर सकीं।

उदास प्रतापवर्मा को संबोधित करते हुए धन्वंतरी ने कहा "राजन्, आप अनुमति दें तो कविता के प्रति मेरी जो आसक्ति है, उसे पड़ोसी राज्य के कवियों के सम्मुख प्रदर्शित करना चाहता हूँ।

काशीराम शास्त्री

प्रतापवर्मा ने आश्चर्य-भरे नेत्रों से क्षण भर के लिए धन्वंतरी को देखा और 'हाँ' के भाव में अपना सिर हिलाया। धन्वंतरी ने छंद-बद्ध कविताएँ सुनायीं ; ये कविताएँ विविध विषयों पर थीं। इन्हें सुनकर पड़ोसी राज्य के कवियों ने ज़ोर-ज़ोर से तालियाँ बजायीं।

प्रतापवर्मा ने पडोसी राज्य के कवियों के साथ-साथ धन्वंतरी का सम्मान किया। उनके चले जाने के बाद राजा ने धन्वंतरी से पूछा "मुझे मालूम ही नहीं था कि आप इतने प्रतिभावान कवि हैं।"

धन्वंतरी ने विनयपूर्वक कहा "क्षमा चाहता हूँ, महाराज। मेरी वृत्ति वैद्य है। प्रवृत्ति है - कविताओं में प्रयोग करने की। फ़ुरसत के समय कविता के बारे में ही सोचता रहता हूँ और थोड़ा-बहुत लिख लेता हूँ। आप मुझे कोई बड़ा कवि न समझें।"

प्रतापवर्मा ने यह नहीं माना और कहा "प्रवृत्ति से संबंधित वृत्ति को अपनानेवाला ही उसके साथ न्याय कर सकता है। आगे वैद्य की वृत्ति से निवृत्त हो जाइये और कविता को अपना साधन बना लीजिये। इसी में लीन हो जाइये।"

धन्वंतरी को लाचार होकर राजा की सलाह माननी ही पड़ी। कुछ समय के बाद राजा की पीठ पर फोड़ा निकल आया। उस समय धन्वंतरी पड़ोस के राज्य में संपन्न होते हुए कवि-सम्मेलन में भाग लेने गया। उसके शिष्यों ने भरसक कोशिश की, लेकिन कोई भी राजा की चिकित्सा नहीं कर पाया।

एक दिन राजा की पीडा रामशर्मा से देखी नहीं गयी तो उसने राजा से कहा "वैद्य-शास्त्र में मेरा थोड़ा बहुत प्रवेश है। क्या चिकित्सा करने का प्रयत्न करूँ?"

इतनी पीडा सहते हुए भी राजा ने धन्वंतरी की तरफ़ आश्चर्य से देखा और अविश्वनीय ढंग से अपना सिर हिलाया।

रामशर्मा फ़ौरन घर गया और पिछवाड़े के एक पौधे को जड-सहित ले आया।

उसने उसके टुकड़े किये और उन्हें खूब पीसा। फिर उसे राजा के फोड़े पर रखकर पट्टी से बांध दिया।

आश्चर्य की बात है कि फोड़ा दूसरे ही दिन निकल गया और राजा एकदम स्वस्थ हो गया। राजा ने रामशर्मा के गले लगते हुए कहा "वैद्य-शास्त्र में आपकी प्रतिभा श्लाघनीय है। आगे से कविताएँ रचते हुए अपने समय का दुरुपयोग मत कीजिये।"

तब रामशर्मा ने कहा "जैसी आपकी इच्छा महाराज। अपने घर के पिछवाड़े में जितने भी पौधे मैंने रोपे, वे सब के सब जड़ी-बूटियों से ही संबंधित पौधे हैं। जब आस्थान में हूँ, तभी कविताओं के बारे में सोचता हूँ, पर जब घर पर होता हूँ, मेरा सारा ध्यान वैद्य पर ही केंद्रित रहता है।"

"अब तक आपने बताया क्यों नहीं? भविष्य में कविता को ताक़ में रखिये और वैद्यवृत्ति पर ही ध्यान दीजिये।" प्रतापवर्मा ने कहा।

कुछ दिनों के बाद युवक कवियों का एक समूह प्रतापवर्मा के राज्य में आया। राजा ने कवि-सम्मेलन का प्रबंध किया। चूँकि धन्वंतरी अब भी सीखने की स्थिति में ही था, इसलिए उन कवियों का मुक़ाबला नहीं कर पाया।

तब रामशर्मा ने कवियों के प्रश्नों के उत्तर आसानी से दिये और उनसे प्रस्तुत समस्याओं का हल किया। अपने पांडित्य
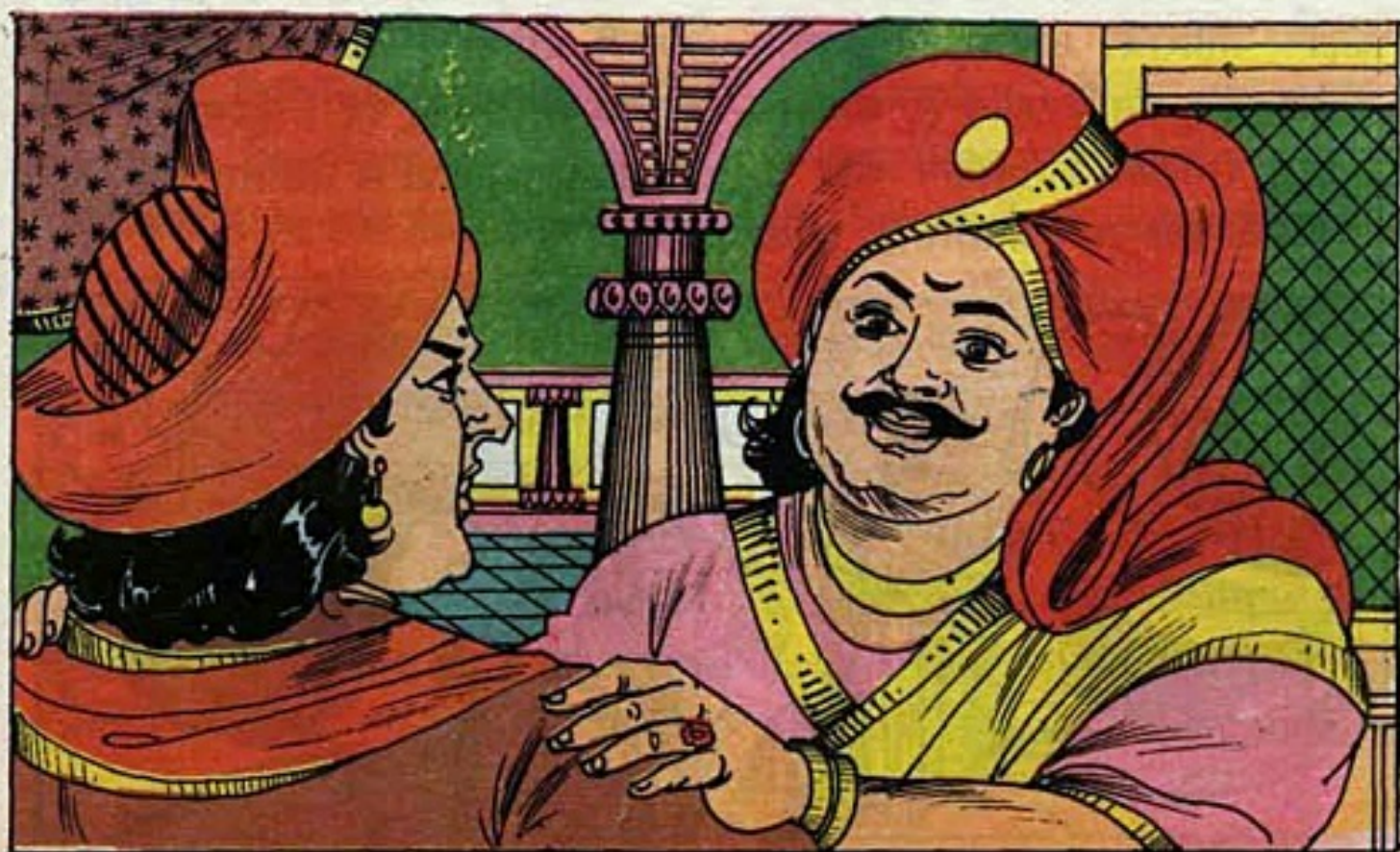
से उन्हें परेशान कर दिया। राजा को इसपर बहुत ताज्जुब हुआ।

एक सप्ताह के बाद प्रतापवर्मा का चार साल का बेटा बीमार पड़ा। राजा ने रामशर्मा को ख़बर भेजी। उसने विविध प्रकार की जड़ी-बूटियों से तीन दिनों तक इलाज किया, पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। बुखार नहीं उतरा।

धन्वतरी को जब यह बात मालूम हुई तो तुरंत राजमहल आया। साथ लायी थैली से एक गोली निकाली और उसे राजकुमार के मुँह में डाल दी। घंटे भर में बुखार उतर गया। फिर दो और गोलियाँ देकर उसे बिलकुल स्वस्थ कर दिया।

प्रतापवर्मा इससे चकित रह गया। मंत्री से अपने संदेह व्यक्त किया। मंत्री ने राजा से कहा "महाराज, धन्वंतरी ने अभ्यास किया वैद्य, परंतु उसकी प्रवृत्ति है, कविता। उसी तरह रामशर्मा प्रतिभावान कवि है, किन्तु वैद्य के प्रति उसमें आसक्ति है, इसका यह मतलब नहीं कि अपनी-अपनी प्रवृत्तियों से संबंधित क्षेत्रों में उन्हें प्रवीण बनना चाहिये। क्योंकि वृत्ति मस्तिष्क से संबंधित है तो प्रवृत्ति मन से संबंधित है। मस्तिष्क तथा प्रवृत्ति का सही समन्वय करके निश्चित क्षेत्र में प्रवीण बनने का सामर्थ्य कुछ ही लोगों में होता है। सब में यह सामर्थ्य नहीं होता, इसके उदाहरण हैं - धन्वंतरी और रामशर्मा।

तब जाकर राजा ने अपनी ग़लती महसूस की। उसने दोनों को बुलवाया और उनसे कहा "आप दोनों से मैंने कहा था कि आप अपनी-अपनी प्रवृत्तियों से संबंधित वृत्तियों को अपनाएँ और उनमें प्रवीण बनें। मैंने सोचा था कि ऐसा करके मैं आपकी भलाई कर रहा हूँ। पर अब मैं जान गया कि यह मेरी ग़लती है। अब मैं चाहता हूँ कि आप अपनी-अपनी वृत्तियों में ही लगे रहें। फ़ुरसत के समय ही अपनी प्रवृत्तियों से संबंधित काम-काज करें।"

चंदन की पटवारगिरी

रंगापुर के पटवारी की उम्र ज्यादा हो गयी, इसीलिए अपनी पटवारगिरी अपने बेटे चंदन के सुपुर्द की । उसने अपने बेटे से कहा "कहते हैं कि गाँव में बाढ़ आ जाए, तब भी पटवारी के घर में धन की वर्षा होती रहती है । और यह सच भी है । परंतु सरकार की आमदनी में हाथ डालने की पद्धति अच्छी नहीं है । कुठले के नीचे के घिरौरों की तरह नहीं, बल्कि रसोइघर में बिचरते छोटे-छोटे चूहों की तरह किसानों के दिये पैसों पर हमें जीना है । धनिक किसानों से शत्रुता मोल लेना अच्छा नहीं है । ग़रीब किसानों की हमें मदद करनी है और उनसे मदद भी लेनी है । तरह-तरह की मुसीबतों का हमें मुक़ाबला करना होगा और इसका ख्याल रखना होगा कि अधिकारी हम पर क्रोधित न हों । इन सब तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए, जितना हम कमा सकते हैं, कमाएँ । इस तथ्य को सक्रम रूप से उपयोग में लाने पर ही तुम पटवारगिरी में सफल हो सकते हो।"

चंदन ने चुपचाप पिता का कहा सुन लिया । कुछ दिन गुज़र गये । एक दिन शत्रु नामक एक किसान चंदन से मिलने आया । वह अपने एक एकड़ की ज़मीन बेचनेवाला है । इसीलिए वह चाहता था कि पटवारी चंदन आवश्यक माप-नाप करे और लिखकर दे कि उसका कोई बकाया नहीं है । इससे खरीदनेवाला निश्चिंत होकर खरीदे और मामला बिना किसी अड़चन के साफ़ हो जाए ।

चंदन ने तत्संबंधी हिसाब की किताबें देखीं । किताबों में दर्ज नहीं था कि शत्रु ने रक़म चुंका दी । किन्तु रसीद की किताबों में दर्ज था कि उसने पैसा चुका

जिनके नाम बकायेदारों की फेहरिश्त में हैं और उन्होंने जो रक़म चुकायी, वह रक़म उस रक़म के बराबर होगी, जिसे धनिक किसानों से वसूल करना है। शत्रु जैसे ग़रीब किसान सही समय पर सही कर चुकाते हैं। इनमें ईमानदारी है। उन्हें रसीद देना हमारा फ़र्ज़ बनता है। जो धनिक किसान कर नहीं चुकाते, वे नहीं चाहते कि उनपर सरकार का दबाव पडे, इसलिए इससे बचने के लिए हमें धन देते रहते हैं। यों हमारी ज़रूरतें भी पूरी होती हैं। इसलिए हम अपने हिसाब की किताबों में दिखाते हैं कि उन्होंने पूरा कर चुका दिया, उनसे हमें कुछ मिलना नहीं है। शत्रु जैसे ग़रीब किसानों के पास रसीदें हैं, पर उनके नाम हम बकायेदारों की फेहरिश्त में लिख लेते हैं। हम अधिकारियों से बताते हैं कि बेचारे ग़रीब किसान तंगी के कारण सही समय पर कर चुका नहीं पाये, इसलिए उनपर हमने दबाव नहीं ड़ाला। उनसे झूठ कहकर, उनकी जेब भी गरम करके भेज देते हैं। यही पटवारगिरी का रहस्य है।''

दिया। चंदन ने सिर खुजलाया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसा क्यों हुआ? ऐसे तो चार सालों से लगातार शत्रु कर चुका रहा है, फिर भी बकायेदारों की फेहरिश्त में उसका नाम क्यों दर्ज है?

चंदन ने अपने पिता से यह बात कही। बूढ़ा पटवारी ज़ोर से हँसता हुआ बोला "इसी को पटवारगिरी कहते हैं। सिर्फ़ शत्रु ही नहीं, बल्कि कितने ही छोटे-छोटे किसानों के नाम बकायेदारों की फेहरिश्त में पाओगे। किन्तु, अनेकों सालों से भूषण तथा रंगा जैसे धनिक किसान यद्यपि कर नहीं चुका रहे हैं, फिर भी उनके नाम इसमें तुम्हें दिखायी नहीं देगा।

चंदन को लगा कि यह पद्धति सही नहीं है; इसमें धोखा है। उसने शत्रु का खेत मापा और लिखके दे दिया कि उसने पूरा कर चुकाया। काम पूरा हो जाने के बाद चंदन ने उससे कहा "हमारे दादा-

परदादा जब पटवारी थे, तब उन्हें खाने-पीने की कमी नहीं थी। दिन बदल गये। धनी किसान और ज़मींदार बुरी लतों के शिकार हो रहे हैं और क्रमशः वे दिवालिये हो रहे हैं। हमें भी ठोस वेतन मिलता तो तुम जैसे ग़रीब किसानों से प्रतिफल की आशा न रखते।"

शत्रु ने विक्रेता को प्रणाम किया और चला गया। उस दिन से चंदन बकायेदारों की सूची में शत्रु के नाम की जगह पर भैरव का नाम लिखने लगा।

दो-तीन साल गुज़र गये। पिता के कहे मुताबिक ही वह पटवारगिरी संभालता रहा। बिना किसी कमी के ज़िन्दगी गुजारने लगा। अकस्मात् उसके पिता का देहांत हुआ। दहन-संस्कार के बाद चिता-भस्म निमज्जन करने काशी गया। अधिकारियों के ज़ोर देने पर काशी जाने के पहले पटवारगिरी की जिम्मेदारी अपने दायाद को सौंपनी पड़ी।

चंदन का उत्तराधिकारी था बच्चन। वह बड़ा ही दुष्ट था। तात्कालिक रूप से प्राप्त पटवारगिरी को शाश्वत बना लेना चाहा। गाँव के धनी किसानों से मिला और हिसाब के रहस्य उन्हें बताते हुए कहा "हमारे हिसाब के मुताबिक आपमें से किसी को कर चुकाने की ज़रूरत नहीं है। छोटे-छोटे किसानों ने जो कर चुकाये, उनकी रसीदें हैं किन्तु हिसाब की किताबों में यह दर्ज नही है। इसलिए चंदन ही दोषी

ठहराया जाएगा । आप मेरा साथ दें तो आपका भी भला होगा और मुझे भी नौकरी मिलेगी । आगे से आप जैसा चाहेंगे, करूँगा ।''

किसानों में से बहुतों ने 'हाँ' कह दिया । महीने भर के बाद जब चंदन गाँव लौटा, तो पाया कि गाँव में बहुत ही शोरगुल मचा हुआ है । बच्चन ने मुनादी पिटवायी कि जिन-जिन लोगों ने कर नहीं चुकाये, वे सब रसीदें लेकर आवें । अगर साबित हो जाए कि फलाने ने कर नहीं चुकाया तो उसका खेत ज़ब्त होगा ।

बहुत-से किसानों ने जब जाना कि उनके नाम कर चुकानेवालों में से नहीं है तो वे बहुत नाराज़ हो उठे । उन्होंने चंदन से प्रश्न किया । चंदन ने उन्हें शांत किया और छिपे-छिपे धनी किसानों से मिलकर उनसे कहा ''महाशय, छोकरे की शरारत से आप लोग खुश नज़र आ रहे हैं । उसकी बातों में आ गये और आप समझ रहे हैं कि आप उस सूची में है, जिन्हें कर चुकाना नहीं है । चंद महीनों के पहले जो बाढ़ आयी थी, तब आपने गन्ना उपजाया । किन्तु आपने मुझसे लिखवाया था कि केले के पौधे रोपे गये हैं । आपने उन अधिकारियों से इसके लिए आर्थिक सहायता भी पायी । मैं यह पोल खोल दूँगा तो आप सब मुश्किलों में फँस जाएँगे । मेरी नौकरी जाए तो जाए, मैं परवाह नहीं करता । धनहानि तो होगी ही, साथ ही आपकी गौरव-हानि भी होगी ।''

धनी किसान उसकी धमकी से घबरा गये । उन्होंने सब ग्रामीणों की बैठक बुलायी और पटवारी की प्रशंसा के पुल बाँध दिये । उसकी ईमानदारी और सच्चाई के गीत गाये ।

यों चंदन ख़तरे से बच गया, पर अब वह चौकन्ना हो गया । उस दिन से छोटे से छोटे और बड़े किसानों का हिसाब-किताब सही-सही रखने लगा और अच्छा नाम कमाया ।

द्वारका में कृष्ण ने शासन-संबंधी समस्त कार्यों को वसुदेव के सुपुर्द किया। धर्मराज से संपन्न होनेवाले राजसूय यज्ञ में भाग लेने के लिए निकल पड़ा। वह अपने साथ यज्ञ के लिए आवश्यक सामग्रियाँ भी लेता आया। साथ ही रत्न, धन-धान्य आदि लेकर राजधानी पहुँचा।

धर्मराज ने कृष्ण से कहा "राजसूय यज्ञ की पूर्ति में तुम्हारी सहायता नितांत आवश्यक है। इस यज्ञ को पूरा करने की मुझे अनुमति दो अथवा तुम्हीं स्वयं यह यज्ञ करो।"

कृष्ण ने कहा "धर्मराज, साम्राज्य का भार उठाने की शक्ति तुम्हीं में है। तुम ही इसके योग्य हो। अतः तुम्हीं यज्ञ करो। जो-जो काम मुझे सौंपोगे, उन्हें मैं पूरा करूँगा।"

कृष्ण की बातों से धर्मराज बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सहदेव को बुलाया और कहा कि यज्ञ के लिए आवश्यक प्रबंध किये जाएँ और इसमें भाग लेने के लिए चारों वर्णों के लोग आह्वानित हों। नकुल को बुलाकर उससे कहा "तुम हस्तिनापुर जाओ और भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, दुर्योधन आदि को बुला लाना।"

सहदेव ने बड़ी ही दक्षता से सारे प्रबंध पूरे किये। नकुल हस्तिनापुर से कौरव प्रमुखों को बुला ले आया। अतिथियों को धर्मराज ने राजसूय यज्ञ के विवरण सुनाये। उनका आशीर्वाद और सहयोग पाया। दान-धर्म की जिम्मेदारी कृपाचार्य को सौंपी गयी। दुःशासन को भोजन के प्रबंध की जिम्मेदारी सौंपी

गयी । अश्वथ्यामा ने ब्राह्मणों के आदर-सत्कार का भार अपने ऊपर लिया । संजय राजाओं के आदर-सत्कार का प्रभारी बनाया गया । उपस्थित अतिथियों से भेटें ग्रहण करने का भार दुर्योधन को सौंपा गया । भीष्म और द्रोण से प्रार्थना की गयी कि वे देखते रहें कि सब कार्य सक्रम रूप से संपन्न हों रहे हैं कि नहीं । कार्य-भार सब को सौंपने के बाद धर्मराज ने यज्ञ-दीक्षा ली ।

जितने भी वहाँ आये, सब की इच्छा राजसूय-यज्ञ तथा मय सभा देखने की थी । राजा अपार भेटें ले आये । जब तक याग चलता रहा, तब तक बिना रुके ब्रह्म-भोज चलता रहा । यज्ञ की पूर्ति सफलतापूर्वक हुई । तब भीष्म ने धर्मराज से कहा "स्नातक, ऋत्विज, सद्‌गुरु, इष्ट, राजा, तथा इंद्रियों के समन्वयक पूजा के योग्य माने जाते हैं । इनमें से जो महान हैं, उनकी पूजा अब तुम्हें करनी होगी ।"

धर्मराज ने भीष्म से निवेदन किया "इन में से कौन महान व योग्य हैं, इसका निर्णय आप ही कीजिये । उनकी मैं पूजा करूँगा ।"

भीष्म ने सोच-विचारकर बताया "इस सभा में अग्रपूजा के योग्य एकमात्र कृष्ण है । अतः प्रप्रथम उसे ही अर्घय् देना ।"

पितामह भीष्म की आज्ञा का पालन करते हुए धर्मराज ने सहदेव से कहा कि वह कृष्ण को अर्घय् दे । कृष्ण ने उसे सहर्ष स्वीकार किया ।

शिशुपाल ने इसपर आपत्ति उठायी । कृष्ण का विरोध करते हुए उसने धर्मराज से कहा "धर्मराज, जब कि यहाँ कितने ही राजा और महनीय उपस्थित हैं, तब यादव कृष्ण को कैसे प्रथम अर्घय् दे सकते हो? यह कोई वृद्ध थोड़े ही है? यह तुम लोगों का क्या आचार्य है? कोई महान ऋत्विज है? इसमें ऐसे क्या गुण हैं, जिसके कारण यह पूजा के योग्य चुना गया । तुम्हें सलाह देनेवाले भीष्म को उचित और अनुचित का भेद नहीं मालूम । जब कृष्ण की पूजा सर्वप्रथम करनी ही थी तो इतने राजाओं को बुलाने की क्या आवश्यकता है? क्या यह इन सबका अपमान नहीं ?

तुम्हें प्रतापी, पराक्रमी मानकर हमने कर नहीं चुकाया । हमने तो केवल यही सोचकर कर चुकाया था कि तुम धर्मपरायण हो, सत्यव्रती हो, साम्राज्य-भार संभालने की शक्ति रखते हो । यह बुरा काम करके तुमने किया-कराया सब मिट्टी में मिला दिया । अपनी कीर्ति पर कलंक लगाया ।'' बाद उसने कृष्ण से कहा ''तुम्हारे कुतंत्रों से भयभीत होकर अथवा तुमपर इनका जो प्रेम व विश्वास है, इस कारण उन्होंने प्रथम तुम्हें ही अर्घ्य् दिया भी तो तुमने क्यों स्वीकार किया ? इतना भी नहीं सोचा कि मै इस योग्य हूँ या नहीं । पाँडवों से प्राप्त यह गौरव पाने के हक़दार तो राजा हैं, तुम नहीं । पाँडवों से प्राप्त यह गौरव निष्फल है । इससे अपमान तो तुम्हारा ही हुआ, सभा में उपस्थित किसी का नहीं । धर्मराज की धर्मबुद्धि, भीष्म की सद्बुद्धि तथा तुम्हारे अविवेक को जानने के बाद इस सभा में रहना ही नहीं चाहिये ।'' कहता हुआ वह अति क्रोधित हो, परिवार सहित वहाँ से जाने लगा ।

धर्मराज उसके पीछे दौड़ा और कहा ''शिशुपाल, रुक जाओ । जाना मत। इस प्रकार तुम्हारा बोलना उचित नहीं लगता । अन्यायपूरित है । भीष्म जैसे वृद्ध का अपमान करना अनुचित है । कृष्ण के बारे में वे तुमसे अधिक जानते हैं । तुमसे भी बड़े लोग सभा में उपस्थित हैं, परंतु उनमें से किसी ने भी कोई आपत्ति नहीं उठायी । फिर अकेले तुम्हीं ने ऐसे आरोप क्यों लगाये ?'' यों धर्मराज ने उसे शांत करने का प्रयत्न किया ।

तब भीष्म ने धर्मराज से कहा ''इस दुष्ट शिशुपाल से क्यों गिड़गिड़ा रहे हो? उसे जाने दो ।'' फिर उसने सभा में उपस्थित प्रतिनिधियों से कहा ''यह शिशुपाल महामूढ़ है । इस कारण यह कृष्ण का महत्व नहीं जानता । अगर हमारा यह काम उसे पसंद न हो, तो उससे जो हो सकता है, कर ले । हमें इसकी कोई परवाह नहीं ।''

''कृष्ण की हमने पूजा की, इसपर किसी को आपत्ति हो तो उसके सिर पर मैं अपना पॉव रखूँगा ।'' कहते हुए रौद्र रूप लिये सहदेव ने अपना पॉव उठाया ।
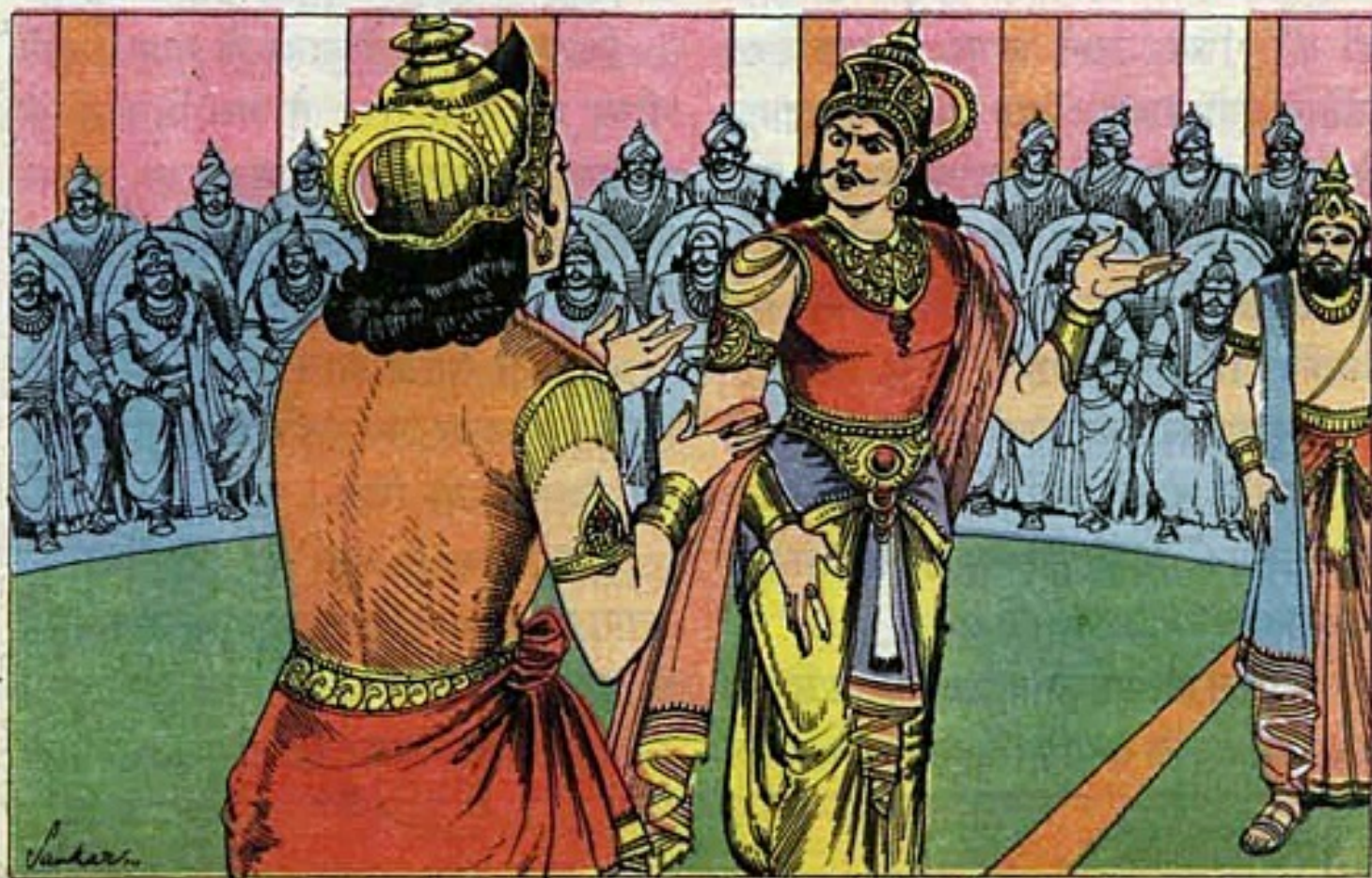
किसी ने भी सहदेव का उत्तर नहीं दिया । तब शिशुपाल के सेनाधिपति सुनीदुर ने उठकर कहा ''राजाओ, उठो, यादव और पाँडवों ने हमारा घोर अपमान किया । सेनाओं को सन्नद्ध करके हम इन्हें दबा देंगे, अपने अपमान का बदला लेंगे ।'' कहकर उसने अपने पक्ष के सारे राजाओं को एक तरफ़ खड़ा कर दिया । शिशुपाल ने इसके लिए अपनी अनुमति दी ।

यह सब कुछ देखते हुए धर्मराज डर गया और भीष्म से कहा ''पितामह, राजा युद्ध करने सन्नद्ध हो गये हैं । आप ही कोई ऐसा उपाय सुझाइये, जिससे यज्ञ में विघ्न न पड़े और जनता की कोई हानि न हो ।''

भीष्म ने कहा ''कृष्ण जब तुम्हारे यज्ञ की रक्षा कर रहा हो, तब कोई भी उसमें विघ्न डाल नहीं सकता । किसी भी में इतनी शक्ति नहीं । शिशुपाल का बुरा समय निकल आया, इसीलिए ऐसी दुर्बुद्धि उसमें जगी ।''

शिशुपाल आप से बाहर हो गया । उसने भीष्म को तरह-तरह से संबोधित करके गालियाँ दीं । कृष्ण को कोसता रहा, उसपर निंदायें डालता रहा । उसकी बातें सुनते हुए भीम में आवेश उमड़ आया ।

रौद्राकार धारण करके, दांतों को पीसते हुए शिशुपाल पर पिल पड़ने अग्रसर होने लगा तो भीष्म ने उसे रोका ।

फिर भीष्म ने भीम को शिशुपाल का वृत्तांत यों सुनाया । शिशुपाल जन्मा तीन आँखों से, चार हाथों से । गधे की तरह रेंकते हुए । इसके कुरूप को देखकर भयभीत उसकी माता

सात्वती व पिता दमघोष उसे फेंक देना चाहते थे। तब अशरीरवाणी ने कहा "आप से फेंकिये मत। यह बड़ा पराक्रमी होगा। इसकी मृत्यु अभी नहीं होगी। इसको मारनेवाले ने कहीं जन्म लिया है और पल रहा है।"

तब सात्वती में पुत्रमोह जगा और उसने अशरीरवाणी से पूछा "कहो, इसे कौन मार ड़ालेगा ?" अशरीरवाणी ने कहा "जो इसे अपने हाथों में लेगा, जब इसकी आँख और अदना हाथ चले जाएँगे तब उसी के हाथों इसकी मृत्यु होगी।"

तब से सात्वती उन-उन के हाथों अपने विकृत बेटे को देती रही, जो उसे देखने आते थे।

उस समय एक दिन बलराम व कृष्ण चंदिपुर आये। उन्होंने दमघोष से थोड़ी देर तक बातें कीं। फिरं अंत:पुर में जाकर सात्वती से मिले।

कुशल-मंगल पूछने के बाद उसने अपने बेटे को बलराम के हाथ दिया। बाद उसने उसे कृष्ण के हाथों में रखा।

कृष्ण के हाथों में रखते ही उस बालक की अदनी आँख और अदने दोनों हाथ ग़ायब हो गये। अब सात्वती समझ गयी कि उसकी मृत्यु कृष्ण के हाथों होगी। कृष्ण से उसने गिड़गिड़ाया कि पुत्र की त्रृटियों को क्षमा कर दो।

तब कृष्ण ने वचन दिया कि उसकी सौ त्रृटियों को क्षमा कर दूँगा।

भीष्म की कही इन बातों को सुनकर शिशुपाल भीष्म को गालियाँ देता रहा, बुरा-भला कहता रहा। फिर उसने कृष्ण को संबोधित करते हुए कहा "मुझसे युद्ध करो। जब तक मैं तुम्हें मार नहीं डालूँगा तब तक भीष्म ऐसे ही बकता रहेगा। तुम्हें मारकर मैं इसका घमंड चूर-चूर कर दूँगा। फिर पाँडवों को देख लूँगा, जिन्होंने हमारा अपमान किया। तुम्हारी पूजा के अपराध में इन्हें भी मृत्यु का दंड़ दूँगा।" यों बहुत देर तक जो मुँह में आया, बकता रहा।

कृष्ण सब कुछ शांत हो सुनता रहा। उसकी सहनशक्ति जब सीमा से पार हो गयी तो उसने उपस्थित जनों से कहा "आपने तो

सब कुछ सुन लिया। यद्यपि यह हमारी मामी का पुत्र है, फिर भी इसने अकारण ही हम यादवों के साथ बहुत ही बुरा व्यवहार किया। हमें बहुत ही नष्ट पहुँचाये। जब हमने प्राग्जोतिपुर पर आक्रमण किया तब इसने द्वारका में प्रवेश किया और उसे जलाकर भाग गया। जब हम रैवत पर्वत पर विश्राम ले रहे थे, यह वहाँ आया। हममें से कुछ लोगों को मार डाला और कुछ स्त्रीयों का इसने अपहरण किया।

हमारे पिता वसुदेव जब अश्वमेध याग कर रहे थे, तब इसने अश्व का अपहरण किया। बभ्रुवाहन की पत्नी को भी उठा ले गया। रुक्मिणी से यह विवाह करना चाहता था, पर इससे हो नहीं पाया।

इस प्रकार इसने कितने ही अन्याय व अत्याचार किये। फिर भी हम चुप रहे, क्योंकि हमें मामी को दिया गया वचन निभाना था। अपना वचन निभाने के लिए चुप रहना हमारा धर्म था।"

कृष्ण की इन बातों को सुनकर शिशुपाल ने विकट रूप से अट्टहास करते हुए कहा "कृष्ण, जिस कन्या को मैंने पसंद किया, उस कन्या से तुमने विवाह किया। यह बात सबों को कहते हुए तुम्हें लज्ञा नहीं आती? निर्लज्ञ कहीं के। तुम तो बातें ऐसी कर रहे हो, मानों मैं तुम्हारी ही दया पर जीवित हूँ। मैं तो तुमसे डरता ही नहीं। तुमसे जो हो सकता है, कर लो।"

तक्षण ही कृष्ण ने अपना सुदर्शन चक्र कर में लिया और शिशुपाल पर प्रयोग किया। उसने शिशुपाल का सिर काट डाला। शिशुपाल धराशायी हो गया।

उसके अंदर का तेजस्व बाहर निकला और कृष्ण में ऐक्य हो गया, जिसे देखकर सब लोग आश्चर्य में डूब गये।

धर्मराज ने आज्ञा दी कि शिशुपाल की अंत्यक्रियाएँ की जाएँ। फिर उसके पुत्र का राज्याभिषेक किया।

राजसूय-यज्ञ पूर्ण हुआ। धर्मराज ने स्नान करके अपनी दीक्षा समाप्त की। सब राजाओं ने सम्राट धर्मराज को बधाइयाँ दीं और अपने-

अपने देश लौटने की अनुमति माँगी ।

धर्मराज ने उन सबका योग्य सत्कार किया और हस्तिनापुर की सीमा तक उनके साथ जाकर उन्हें बिदा करने के लिए अपने भाइयों को भेजा । तदुपरांत कृष्ण भी द्वारका चला गया । मयसभा देखने की प्रबल इच्छा लेकर दुर्योधन मात्र, शकुनि के साथ ठहर गया ।

एक दिन व्यास धर्मराज की सभा में आये । तब धर्मराज ने अपनी शंका दूर करने के लिए उनसे पूछा "राजसूय-यज्ञ के समय शिशुपाल का वध हुआ । क्या यह उत्पात का संकेत नहीं?"

"हाँ, यह उत्पात ही है । इसका फल तेरह वर्षों के बाद ही प्रकट होगा । तब क्षत्रियों का विनाश होगा ।" व्यास ने कहा ।

यह सुनकर धर्मराज व्याकुल हो गया । अर्जुन ने उसे धीरज धरने को कहा ।

मयसभा देखने के लिए ठहरे उत्सुक दुर्योधन का पराभव हुआ । जल-मय प्रदेश को जलहीन समझकर उसने धोती ऊपर कसी और उतरा । कपड़े उसके भीग गये । यह देखकर भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी तथा सेवक-सेविकाएँ हँस पड़े । धर्मराज ने जब इस घटना का विवरण जाना तो उसने दुर्योधन को नूतन वस्त्र दिये, जिससे उसका मन न दुखे ।

किन्तु दुर्योधन वहाँ तरह-तरह से अपमानित हुआ । अंदर दरवाज़ा था, पर उसे भ्रम हुआ कि वहाँ दरवाज़ा नहीं है तो वह अंदर जाने लगा । उसका माथा दरवाजे से टकरा गया, जिससे माथे पर गुमरा निकल आया ।

भूमि समतल थी, पर उसने समझा कि वह ऊँचाई पर है । वह चढ़ते-चढ़ते नीचे गिर गया । मयसभा देखकर आनंद लूटने के लिए आये दुर्योधन को वह कंटक बन गयी ।

ईर्ष्या से वह जला जा रहा था । धर्मराज सम्राट बन गया, उसे लोकोत्तर मयसभा मिल गयी । यही सोचते-सोचते उसके क्रोध का पारा चढ़ता ही गया । वह मन ही मन अपने को बलहीन समझने लगा । धर्मराज से बिदा लेकर वह हस्तिनापुर निकल पड़ा ।

सेहोरा

परमशिव ने नंदी वाहन पर जाते हुए मार्ग-मध्य में वैतररिणी नदी देखी। वाहन से उतरकर नदी में स्नान करते समय, बाँध पर खड़े नंदी ने पास ही दिखायी देते हुए पेड़ के निकट जाकर उसके पत्तों को अपने सिर से छूया। शिव ने नंदी से पूछा कि तुमने ऐसा क्यों किया? तब नंदी ने कहा "यह सेहोरा पेड़ है। पुराण कहते हैं कि उसके पत्तों को छूने से भोज का भोजन प्राप्त होगा, इसीलिए मैंने उसका स्पर्श किया।" तब शिव ने नाराज़ होते हुए कहा "मुझे ही पुराणों के बारे में कहने लग गये। मैं भी देखता हूँ कि आज तुम्हें भोजन कैसे प्राप्त होगा?" शिव नंदी पर चढ़ बैठे और व्यर्थ ही घूमते रहे। इससे नंदी को आहार नहीं मिला।

कैलास में पार्वती अपने पति की प्रतीक्षा में बैठी थीं। उनके ना आने के कारण दोनों के लिए बनाये गये पकवानों को सामने रखा और खाने लग गयीं। खाते समय उन्होंने नंदी के आने की आहट सुनी। वे घबरा गयीं। उन्होंने सोचा "मुझसे बड़ी भूल हो गयी। पति के पहले ही खा लेना अपचार है।" उन्होंने तुरंत बरतनों को ले जाकर वहाँ रखा, जहाँ नंदी रहता है। फिर वह पति से मिलने गयी। पति को देखते ही उन्हें लगा कि वे बहुत ही क्रोधित हैं।

नंदी से उतरते हुए शिव ने पार्वती को आदेश दिया कि "आज इसे खिलाना मत।" नंदी की समझ में नहीं आया कि आज परमशिव क्यों उससे नाराज़ हैं। दुखी होता हुआ वह सोने की तैयारी करने लगा। तब पकवानों की सुगंध ने उसे आकर्षित किया। वहाँ पार्वती के रखे पकवान थे। नंदी ने बड़े ही आनंद से उन्हें खाया।

पुराणों में कही बातें व्यर्थ नहीं जातीं, यह प्रमाणित करने के लिए सेहोरा वृक्ष से संबंधित यह कथा कही जाती है। इसे वृक्ष-शास्त्र में स्ट्रेब्लस यास्पर कहते हैं। अंग्रेज़ी में इसे कहते हैं - सियास रखबुष। हिन्दी, बंगाली भाषाओं में सेहोरा, मराठी में खरेटी, मलयालम में परूका, तमिल में पिरियामरं तथा तेलुगु में बारेंकि कहते हैं।

इस पेड़ के पत्ते अंडाकार में अंत में नोकदार होते हैं। चूँकि दोनों ओर खुरदरा होता है, इसलिए इसका उपयोग लकड़ी तथा दंत आदि की चिकनाहट के लिए होता है। इसके फूल छोटे और हरे होते हैं। जनवरी-मार्च के बीच इसमें फूल लगते हैं। इसका छिलका खाकी रंग का होता है, जो काफ़ी मज़बूत है। इसमें औषधि के गुण भी हैं।

हमारे देश के ऋषि :

उदंक

महाभारत जैसे प्राचीन ग्रंथों में उल्लिखित महाऋषियों में से मुख्य हैं उदंक ।

उदंक पैलमुनि के शिष्य थे । विद्याभ्यास की समाप्ति के बाद उन्होंने अपने गुरू से पूछा "गुरुवर, आपका ऋण चुकाना असाध्य कार्य है किन्तु आपको गुरु दक्षिणा देने की मेरी तीव्र इच्छा है । बताइये कि आप क्या चाहते हैं ?"

गुरु ने कहा "मेरी कोई इच्छा नहीं । मेरी पत्नी से पूछो कि क्या उसे कुछ चाहिये?" उदंक गुरु की पत्नी के यहाँ गये और विषय बताया । गुरु की पत्नी ने कहा "पौष्यराजा की पत्नी के अद्भुत कुंडल चाहिये ।"

उदंक पौष्यराजा के पास गये । अपने गुरु की पत्नी की इच्छा बतायी ।

"रानी अंत:पुर में है । तुम्हीं स्वयं जाओ और उससे प्रार्थना करो ।" राजा ने उदंक से कहा ।

उदंक अंत:पुर गये, किन्तु वहाँ रानी नहीं थी । वे लौटे और राजा से यह बात बतायी । राजा ने थोड़ी देर तक मौन धारण किया और फिर पूछा "क्या आज प्रात:काल तुमने स्नान किया? ध्यान-मग्न हुए? देवताओं को समर्पित करने के बाद ही आहार स्वीकार किया?"

उदंक ने कहा "नहीं।"

"कल इन नियमों का पालन करो और अंत:पुर में आकर रानी का दर्शन करो। रानी दिखायी देगी।" राजा ने कहा।

राजा के कहे अनुसार ही उदंक ने किया और दूसरे दिन अंत:पुर में रानी से मिलने आये। तब रानी दिखायी पड़ी। वह उदंक के विनय-स्वभाव से बहुत ही प्रसन्न हुई। उनके माँगे कुंडल निकालकर उसे दिये।

गुरु के आश्रम में लौटते हुए, मार्ग-मध्य में सरोवर दिखायी पड़ा तो स्नान करने की उनकी इच्छा हुई। कुंडलों को एक पथ्थर पर रखा और स्नान करने सरोवर में उतरे। स्नान करते-करते उन्होंने देख लिया कि एक सन्यासी उन कुंड़लों की चोरी करके भागा जा रहा है। उन्होंने उस सन्यासी का पीछा किया। सन्यासी एक गुफ़ा में घुसा और साँप बनकर बिल में चला गया।

उदंक ने इंद्र की प्रार्थना की। दूसरे ही क्षण इंद्र के वज्रायुध ने बिल को तहस-नहस कर दिया। तब पाताल लोक का मार्ग दिखायी पड़ा। उदंक उस मार्ग से पाताल लोक पहुँचा। सर्पराज की स्तुति की और तक्षक से चोरी किये गये कुडलों को पाया।

उदंक ने पाताल लोक में देखा कि दो स्त्रीयाँ सफ़ेद और काले धागों से कपड़े बुन रही हैं। करघे के चक्र में बारह पत्र हैं। उस चक्र को छे बालक घुमा रहे हैं।

आश्रम पहुँचकर उदंक ने गुरु-पत्नी को
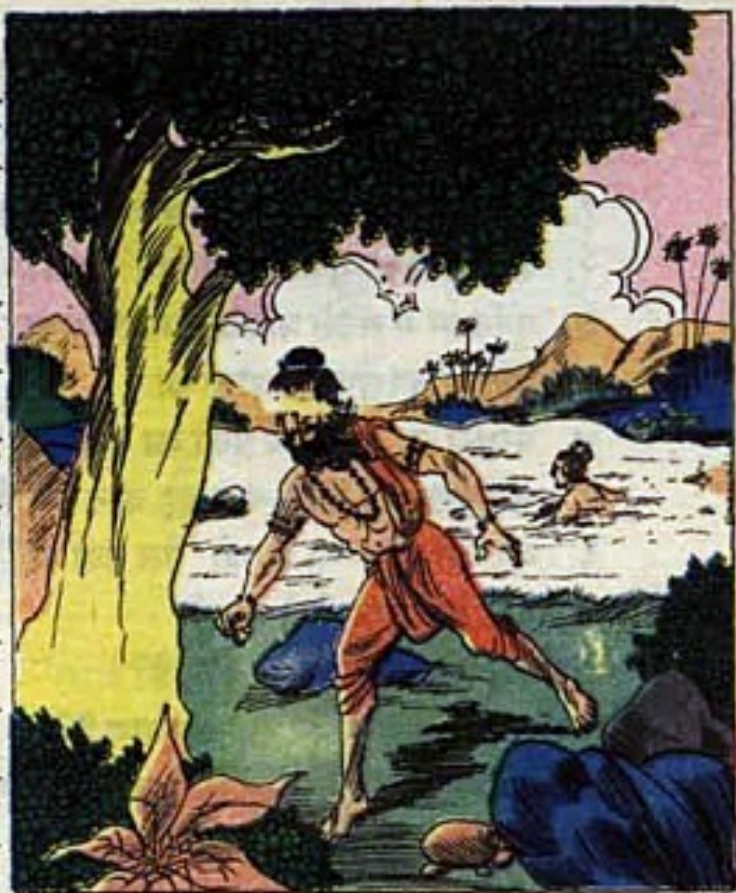
कुंडल समर्पित किया। उन्होंने गुरु को अपने अनुभवों का ब्योरा दिया और साथ ही यह भी बताया कि पाताल लोक में उन्होंने क्या देखा। तब गुरु ने बताया "सफ़ेद और काले धागे दिन और रात के संकेतक हैं। चक्र काल है, बारहों पत्र बारह महीने हैं और चक्र घुमानेवाले बच्चे छे ऋतुओं के संकेतक हैं।"

उदंक की कथा में कुछ गूढ़ रहस्य निहित हैं। उदंक का प्रवेश पाताललोक में हुआ - सृष्टि-रहस्यों के भेदन के लिए। कुंडल निगूढ़ ज्ञान के संकेत हैं। अचंचल आग्रह, निर्विराम परिश्रम, तथा निरंतर जागरूकता होने पर ही दिव्य ज्ञान की प्राप्ति साध्य है। कहते हैं कि यही इस कहानी का अंतरार्थ है।

क्या तुम जानते हो ?

१. संसार के महाकाव्यों में से कौन-सा काव्य अति बृहत है?
२. अधिकाधिक भूकंपों से पीड़ित देश कौन-सा है?
३. पूर्वकाल में संदेश पक्षियों द्वारा भेजा करते थे। इसके लिए किन पक्षियों का उपयोग होता था ?
४. पथ्थरों को खानेवाले पक्षी का क्या नाम है ?
५. सौरमंडल का सबसे बड़ा ग्रह कौन-सा है?
६. वह देश कौन-सा है, जो 'नैल नदी वर' प्राप्त देश कहा गया।
७. वर्षा का प्रारंभ कैसे हुआ?
८. जैन मत के संस्थापक कौन हैं?
९. मनुष्य के हृदय का क्या परिमाण है?
१०. थर्मामीटर में इश्तेमाल किये जानेवाले द्रवलोह का क्या नाम है?
११. अमेरीका के प्रथम अध्यक्ष कौन थे?
१२. तीन महासमुद्रों के क्या नाम हैं ?
१३. नर्स वृत्ति के आरंभ का कारण एक स्त्री है। उनका क्या नाम है?
१४. सूर्यरश्मियों से उपलब्ध विटामिन कौन-सा है ?
१५. हमारे देश में मत देने के लिए कितनी उम्र चाहिये ?
१६. १९९६ 'लीप' साल है। कितने सालों में एक बार यह साल पड़ता है?
१७. 'बुलफैट' के लिए सुप्रसिद्ध दो देश कौन-से हैं?

उत्तर

१. महाभारत
२. जापान
३. कबूतर
४. शुतुरमुर्ग
५. गुरुग्रह
६. ईजिप्ट
७. बादलों के पानी की बूँदें जब भार वहन नहीं कर पातीं
८. वर्धमान महावीर
९. लगभग मनुष्य की जितनी मुट्ठी
१०. पारा
११. जार्ज वाषिंगटन
१२. पसफिक, अटलांटिक, हिन्दू महासमुद्र
१३. फारेन्स नैटिंगल
१४. डी विटामिन
१५. अठारह साल
१६. चार सालों में एक बार
१७. स्पैन, मेक्सिको

शिल्पसुँदरी

मधुमती नगर का शासक था मानसवर्मा। कलापोषक के नाम से प्रख्यात मानसवर्मा विष्णु-भक्त था। उसका संकल्प था कि नगर में एक अतिसुँदर, सुशोभित विष्णु का मंदिर बनाऊँ। शिल्पों को तराशने की जिम्मेदारी उसने रत्नाकर को सौंपी। जो अपने पच्चीसवें वर्ष में ही अद्‌भुत शिल्पी कहलाया जाने लगा। मंदिर के निर्माण के लिए निर्णीत स्थल के निकट की ही एक झोंपड़ी में वह अपने पिता के साथ रहने लगा।

रत्नाकर बड़ी ही तल्लीनता से एकाग्र होकर रात-दिन शिल्पों को तराशने के काम में लगा रहता था। उसके तराशे शिल्पों में जीवन प्रस्फुटित होता था और वे कितने ही मनमोहक लगते थे।

एक दिन सबेरे-सबेरे वह शिल्पों को तराशने के लिए आवश्यक पथ्थरों की खोज में दूर पहाड़ी प्रदेशों में गया। वह अपने साथ नौ नौकरों को तथा एक गाड़ी भी ले गया, जिसे हाथी खींच रहा था।

पहाड़ी प्रदेश में पहुँचते-पहुँचते दुपहर हो गयी। बहुत देर तक रत्नाकर शिलाओं के अन्वेषण में लगा। चार-पाँच शिलाएँ उसे मिल गयीं। उन्हें गाड़ी में चढ़वायीं। पर उसे अब तक मूल विराट् शिल्प के लिए आवश्यक शिला उपलब्ध नहीं हुई। श्रेष्ठ शिला मिली तो माप के हिसाब से सही नहीं थी। माप के हिसाब से सही शिला मिल भी गयी, पर उसमें वह श्रेष्ठता नहीं, जो चाहिये। इससे उसमें निरुत्साह भर गया।

आख़िर सब तालाब के किनारे बैठे और भोजन कर लिया। गाड़ी में जो गन्ना था, हाथी को खिलाया।

रत्नाकर फिर से शिलाओं को ढूँढ़ने में लग गया। देखते-देखते शाम ढल गयी।

पर आवश्यक शिला नहीं मिली। नौकरों ने रत्नाकर से कहा कि अंधेरा छा जाने के बाद क्रूर मृगों के आक्रमण की आशंका है, इसलिए राजधानी लौटना चाहिये। वे अपनी बात दुहराते रहे और रत्नाकर पर दबाव डालते रहे।

रत्नाकर भी चाहता था कि लौट चलूँ। पर उसका मन यह नहीं मानता था कि इतनी दूर आकर मूल विराट शिल्प के लिए आवश्यक शिला लिये बिना लौट पड़ूँ। इसलिए उसने नौकरों की बातें अनसुनी कर दीं और शिला ढूँढ़ने में लग गया।

उस समय उसने देखा कि बरगद के पेड़ के नीचे सोने के रंग में चमकती हुई एक शिला है। सायंकाल की सूर्य किरणें उसपर पड़ रही थीं, जिस कारण वह बिल्कुल सोने की लग रही थी। उस शिला को देखकर रत्नाकर आश्चर्य में डूब गया। वह छे फुट की चौड़ाई की थी। सुवर्ण रंग में शिलाएँ बहुत ही कम मिलती हैं। उसने इसे देवकृपा मानी और उसे नौकरों से गाड़ी में चढ़वायी। राजधानी पहुँचते-पहुँचते अंधेरा छा चुका था।

मालूम नहीं, क्यों रत्नाकर उस रात को सो नहीं सका। आधी रात के बाद छोटी-सी झपकी आ गयी। तब एक ध्वनि सुनायी पड़ी "रत्नाकर, मैं एक गंधर्व कन्या हूँ। शाप के कारण शिला बन गयी। तुम पहाडी प्राँतों से जो शिला ले आये, वह मैं ही हूँ। मुझे मालूम है कि तुम उत्तम कोटि के शिल्पी हो। अपने अमृत हस्तों से शिला को मेरे ही रूप में तराशो। फिर मेरा भाग्य अच्छा रहा तो हो सकता है, मैं जीवित हो जाऊँ।" गंधर्व कन्या ने कहा। रत्नाकर चौंककर उठ बैठा।

अपने इस सपने पर रत्नाकर को बहुत आश्चर्य हुआ। जब उसे पहाडी प्रदेश में वह शिला मिली, तभी उसे संदेह हुआ था। उसके संदेह का दृढ़ीकरण किया गंधर्व कन्या की बातों ने।

रत्नाकर ने सबेरे अपने पिता से सपने की बात कही। ध्यान लगाकर सुनने के

बाद उसके पिता ने उससे कहा "देखो बेटे, लगता है, तुम्हारी लायी हुई शिला अद्भुत है, अपूर्व है। मेरी अंतरात्मा कहती है कि तुम्हारा सपना सच है। मेरा विचार है कि राजा को भी यह सत्य बताया जाए।"

पिता के आशय के अनुसार रत्नाकर क़िले में गया। जो हुआ, सब महाराज को बताया। थोड़ी देर मौन रहने के बाद महाराज ने सेवक को, आस्थान के दैवज्ञ को बुला लाने की आज्ञा दी। उसके आते ही महाराज उसे लेकर अपने रहस्यकक्ष में चला गया।

महाराज ने दैवज्ञ को, रत्नाकर का पहाड़ों में जाना, सुवर्ण शिला का पाना, रात को सपने में गंधर्व कन्या की बातें आदि सविस्तार सुनायीं और पूछा कि अब हमें क्या करना चाहिये?

आँखें बंद करके थोड़ी देर तक दैवज्ञ ध्यान-मग्न हो गया। फिर आँखें खोलकर कहा "महाराज, रत्नाकर को मिली शिला गंधर्व कन्या की ही है। मय राक्षस शिल्पी था। उसके शिष्यों में से परांकुश नामक एक शिष्य ने मानस नामक गंधर्व कन्या को देखा और उसपर मुग्ध हो गया। उसकी सुँदरता ने उसे वशीभूत कर लिया। उसने गंधर्व कन्या से प्रार्थना की कि तुम्हारे रूप को शिल्प के रूप में तराशूँगा। मानस ने उसकी प्रार्थना मान ली और इठलाती-बलखाती हुई सामने खड़ी हो गयी। किन्तु उसने यह कहकर परांकुश की हँसी उड़ायी कि वह शिल्प उतना सुँदर नहीं बनाया गया,

कांति छा गयी। रहस्यकक्ष से बाहर आने के बाद महाराज ने दैवज्ञ को भेजने के बाद रत्नाकर से कहा "शिल्पी, तुम शीघ्र ही उस शिला पर मेरी प्रतिमा तराशो। दस दिनों में यह काम हो जाना चाहिये।"

रत्नाकर ने मौन धारण करके अपना सिर हिलाया। घर लौटने के बाद उसने अपने पिता से महाराज की इच्छा प्रकट की। पिता ने कहा "बेटे, जो न्याय-संगत समझते हो, वही करो। डरना मत।"

उस रात को फिर से गंधर्व कन्या दिखायी पड़ी और कहा "राजा की इच्छा स्वार्थ-पूरित है। वह मेरी शिला है और उसपर मेरे ही रूप को तराशना न्याय-संगत है।"

जो भी हो, रत्नाकर ने निश्चय किया कि उसपर गंधर्व कन्या का रूप ही तराशूंगा।

दूसरे दिन सबेरे रत्नाकर शिला के सम्मुख बैठ गया और ध्यान-मग्न होकर गंधर्व कन्या के रूप की कल्पना में मग्न हो गया। फिर एकाग्रता से छेनी लिये उसके रूप को तराशने लगा। शिल्प को तराशते समय वह अनिर्वचनीय अनुभूति के वश हुआ। उसे दीख रहा था मानों शिल्प मंद-मंद मुस्कुरा रहा है, धीमी ध्वनि में रो रहा है और उससे कानाफूसी कर रहा है।

ठीक दस दिनों के अंदर गंधर्वकन्या का शिल्प पूरा हुआ। रत्नाकर ने शिल्प को

जितना खुद वह है। उसके ऐसे व्यवहार पर क्रोधित परांकुश ने उसे सुवर्ण शिला में परिवर्तित कर दिया और भूलोक में फेंक दी। मेरा विचार है कि ऐसी शिला का उपयोग महाविष्णु की मूर्ति बनाने के लिए न हो क्योंकि गंधर्व कन्या की आत्मा उस शिला में सिमटी होगी। इसी कारण वह रत्नाकर को सपने में दिखायी पड़ी और अपनी इच्छा व्यक्त की। अलावा इसके, इसकी एक और विशेषता है। उस शिला पर चाहे किसी का भी रूप क्यों ना तराशा जाए, वह सजीव तथा नितनूतन यौवन से भरपूर होगा।"

बुढ़ापे में क़दम रखते हुए उस महाराज के मुख पर, दैवज्ञ की बातों से एक नयी

एक बार नख से शिख तक देखा और तृप्त हो मुस्कुराया । रत्नाकर को लगा कि अब यह शिल्प हुबहू उस गंधर्व कन्या की तरह है, जो उसे सपने में दिखायी पड़ी ।

उस दिन महाराज, महारानी के साथ अपना शिल्प देखने आया । मंडप के बाहर रखे गये गंधर्व कन्या के शिल्प को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया और पूछा "रत्नाकर, यह शिल्पसुंदरी कौन है? तुम कोई साधारण शिल्पी नहीं हो, ब्रह्मा के वंशज हो ।" प्रशंसा करते-करते राजा को अपने शिल्प का स्मरण आया । उसने संदेह भरे स्वर में पूछा "देखने में यह सुवर्ण मूर्ति लगती है । मेरी प्रतिमा का क्या हुआ?"

रत्नाकर ने सिर झुकाकर कहा "आपकी आज्ञा का पालन नहीं कर सका । मुझे क्षमा कीजिये । आवश्यक तथा अनिवार्य परिस्थितियों में इस शिला पर गंधर्व कन्या के रूप को तराशा, जिसकी आपने अभी-अभी प्रशंसा की थी ।"

उसकी बातें सुनते ही महाराज की आँखें क्रोध से लाल हो गयीं । उसने तीव्र स्वर में कहा "अपना शिल्प तराशने के लिए कहा तो गंधर्व कन्या का शिल्प तराशने की धूर्तता करने पर तुल गये? क्या जानते हो कि राजा की आज्ञा के तिरस्कार की क्या सज़ा है? फाँसी, हाँ, फाँसी ।"

रत्नाकर सिर झुकाकर ही रह गया । दोषी की तरह मौन खड़ा रह गया । दूसरे ही क्षण आकाश गरजा । देखते-देखते काले-काले बादल घिर आये । धुआँधार वर्षा होने लगी । इस असमय की वर्षा ने राजा, रानी तथा रत्नाकर को आश्चर्य में डूबो दिया । इतने में आकाश से ज़ोर से आवाज़ करती हुई बिजली उस गंधर्व कन्या के शिल्प पर आ गिरी और उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये ।

महाराज को उस समय आस्थान दैवज्ञ की बातें याद आयीं । अगर गंधर्व कन्या की जगह पर शिल्पी उसका रूप तराशता तो उसका भी ऐसा ही अंत हुआ होता । इसकी कल्पना मात्र से वह भय से सिहर उठा ।
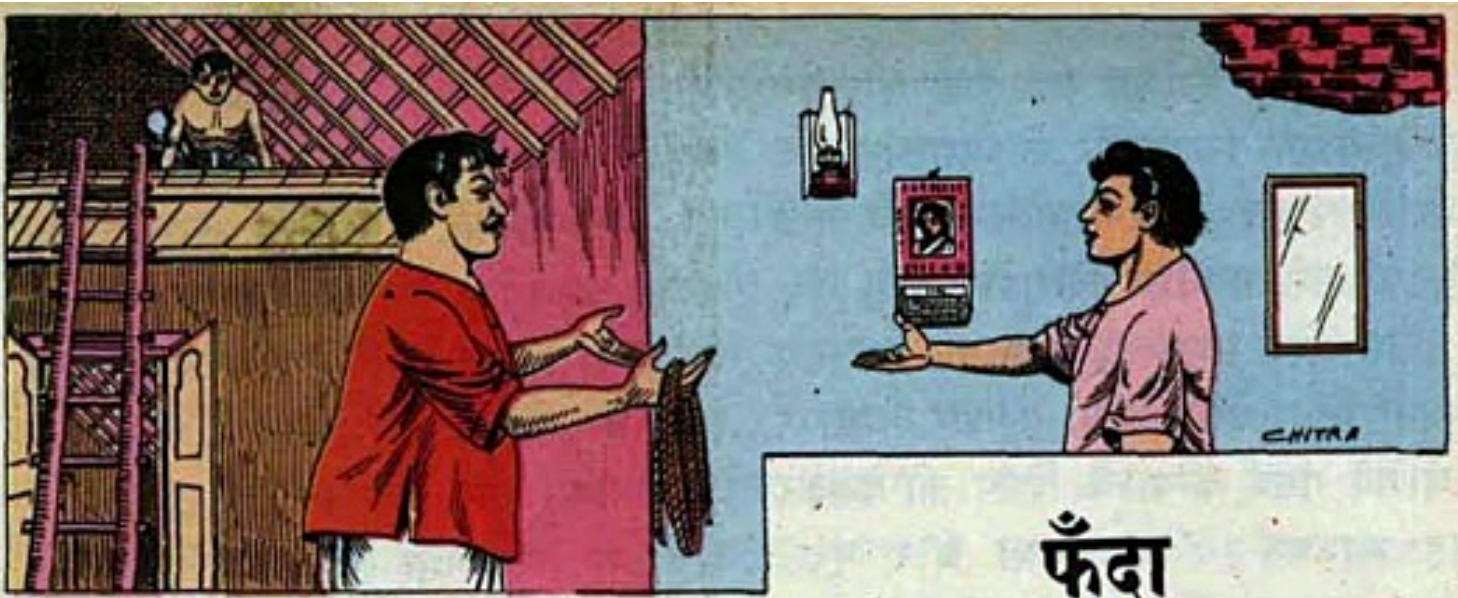
फँदा

एक कुग्राम में एक किसान था। वह और उसकी पत्नी एक के बाद एक कम अवधि में मर गये। उनके तीन बेटे थे।

बड़े ने कहा "यह घर मेरा है।"

दूसरे ने कहा "यह ख़ुश्क खेत मेरा है।"

तीसरे ने अपने भाइयों से पूछा "तो फिर मेरा क्या है?" पूरा घर ढूँढ़ डाला तो टॉड पर बड़ी रस्सी का एक ढेर मिला। भाइयों ने कहा "इसे ले और इसी की मदद से ज़िन्दा रह।"

छोटा भाई हिम्मतवर था। उसमें कूट-कूटकर उत्साह भरा हुआ था। उसने कहा "हाँ, इसी की सहायता से ज़िन्दा रहूँगा।" कहकर उसने रस्सी का ढेर अपने कंधे में लटकाया और निकल पड़ा।

जब वह जंगल से गुज़र रहा था तब उसे वहाँ जंगली जंतु दिखायी पड़े। रस्सी की सहायता से उसने एक गिलहरी और खरगोश को अपने फँदे में फँसाया। लकड़ियों से उसने एक पिंजडा बनाया और उसमें गिलहरी व खरगोश को डाल दिया। उन्हें लेकर वह एक सरोवर के पास पहुँचा।

उसने देखा कि एक रीछ झाड़ियों में घुस रहा है। वह एक पेड़ के नीचे खड़ा हो गया और दूसरे जंतुओं को पकड़ने के उद्देश्य से अपनी रस्सी में छोटे और बड़े फँदे डालता गया।

उस सरोवर में एक जलराक्षस रहता था। उसने पानी में से अपना सिर बाहर निकाला और लड़के को खड़े देखा। पर राक्षस की समझ में नहीं आया कि आख़िर वह लड़का वहाँ क्या कर रहा है। राक्षस एकदम पानी के नीचे चला गया और अपने बेटे से कहा "सरोवर के किनारे कोई लड़का खड़ा है और कुछ कर रहा है। जाओ और पता

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

लगाओ ।"

जलराक्षस का बेटा पानी से ऊपर आया और छोटे लड़के से पूछा "क्या कर रहे हो यहाँ?"

लड़के ने उसे देखते ही जान लिया कि सामने दिखायी देनेवाला वह लड़का जलराक्षस है । उसने जलराक्षसों के बारे में पहले ही सुन रखा था । उसने सुना कि उनमें बुद्धि होती ही नहीं, पर उनकी मुक्ति नहीं होती, जो इनके वश हो जाते हैं । उसने बड़ी ही निर्भयता से जलराक्षस के पुत्र से कहा "दिखायी नहीं देता? फँदा कस रहा हूँ। इसे सरोवर पर फेंकूँगा और सरोवर को पकड़ लूँगा । तुम सब लोगों को कोई नयी और जगह ढूँढ़नी पड़ेगी ।"

जलराक्षस का बेटा तुरंत नीचे चला गया और अपने पिता से कहा "वह लड़का कह रहा है कि सरोवर को फँदे में फँसाऊँगा और सरोवर को ले जाऊँगा । वह कहता है कि हम कोई और जगह ढूँढ़ लें ।"

"तब तो हम आफ़त में फँस गये । तुम फ़ौरन उसके पास जाओ और उसे पेड़ पर चढ़ने की होड़ में भाग लेने को कहो । जैसे ही वह होड़ में हार जायेगा, उसे पानी में ढ़केल दो ।" जलराक्षस ने उपाय बताया । उसका बेटा लड़के के पास आया और बोला "मुझसे बाज़ी लगावोगो? पेड़ पर चढ़ोगे ?"

"देखते नहीं, काम पर लगा हूँ । मेरा छोटा प्यारा भाई तुमसे स्पर्धा में भाग लेगा" कहकर उसने लकड़ियों से बने पिंजडे से गिलहरी को बाहर निकाला ।

आँखें बंद करके खोलने भर की देरी थी, गिलहरी पेड़ पर चढ़ गयी और भाग गयी । वह लौट पड़ा और पिता से कहा कि मैं हार गया हूँ ।

"जो हुआ, भूल जाओ । अब जाओ और उससे दौड़ की प्रतियोगिता में तुम्हें हराने को कहो । इस बार ही सही, उसे हराओ" जलराक्षस ने अपने बेटे से कहा ।

जलराक्षस के बेटे ने छोटे भाई से पूछा "मेरे समान दौड़ सकते हो?" "क्या तुम मुझे बेकार समझते हो? अगर चाहो तो

कहा। वह छोटे भाई के पास आया और मल्लयुद्ध के लिए उसे ललकारा।

"मुझे इतनी फुरसत नहीं कि मैं तुमसे खेल खेलता रहूँ। मेरा बूढ़ा दादा उन झाड़ियों में सो रहा है। तुम चाहो तो जाओ और उससे भिड़ो।" कहकर उसने झाड़ी दिखायी।

जलराक्षस का बेटा उस झाड़ी में गया। वह रीछ से भिड़ता रहा। बेचारा घायल हुआ और मुश्किल से झाड़ी से बाहर आ पाया।

अपने बेटे को फिर से हारा देखकर जलराक्षस ड़र से काँप उठा और बेटे से बोला "इससे समझौता करने में ही भलाई है। जाओ और पूछो कि कितना धन देने पर सरोवर को अपने फंदे में नहीं फँसायेगा?"

अपने नन्हें भाई को भेजूँगा। उसकी बराबरी में दौड़कर दिखाना।"

उसने खरगोश को पिंजडे से बाहर निकाला। वह छलांग मारता हुआ कूदता-फाँदता क्षण भर में आँखों से ओझल हो गया।

जलराक्षस के लड़के ने फिर से पिता को अपनी हार की ख़बर दी। "अरे, यह छोकरा कहाँ से आ गया? यह हमारे पाले कैसे आ पड़ा? देखो, मैं समझता हूँ कि यह तुमसे कोई अधिक बलशाली नहीं। उसे मल्लयुद्ध के लिए न्योता दो और कम से कम इस बार ही सही, उसे हरावो। हराकर तुरंत पानी में ढकेल देना।" जलराक्षस ने बेटे से

जलराक्षस के बेटे को अपने सामने फिर से खड़े पाकर छोटे भाई ने उससे पूछा "क्यों अब भी कोई खेल खेलने का इरादा है? जो हुआ, उतना क्या काफ़ी नहीं?"

"नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। भला हम दोनों आपस में क्यों लड़ें? बताओ कि इस सरोवर को छोड़कर जाने के लिए कितना धन लोगे?" जलराक्षस के लड़के ने पूछा।

छोटे भाई ने थोड़ी देर तक सोचने के बाद अपने सिर पर की टोपी निकालते हुए

कहा "इसे सोने की अशर्फ़ियों से भर दो। बस, समझो, मैं चला गया।" बेटे के लाये इस संदेश को सुनकर जलराक्षस खुश हुआ और कुल्हड़ भर की अशर्फ़ियाँ देकर भेज दिया।

इतने में छोटे भाई ने अपनी टोपी के ऊपरी भाग में छेद डाला और ज़मीन में गड्ढा खोदा। उस गड्ढे पर टोपी को उल्टे रख दिया। कुल्हड भर की अशर्फ़ियाँ जलराक्षस के बेटे ने उसमें उंडेल दीं, पर वह टोपी नहीं भरी।

"और लाओ। देखते नहीं, टोपी और कितनी खाली है।" छोटे भाई ने कहा। जलराक्षस का बेटा और सोना लाने के लिए पिता के पास आया। "अरे, वह टोपी भी ऐसी कैसी टोपी है, जो इतनी अशर्फ़ियाँ डालने के बाद भी नहीं भरी। पर करें क्या? एक और कुल्हड भर की अशर्फ़ियाँ ले जाओ।" जलराक्षस ने लाचार होकर कहा।

दूसरे कुल्हड भर की अशर्फ़ियाँ भी कम पड़ीं। तीसरी बार जब कुल्हड़ भर की अशर्फ़ियाँ लायी गयीं, तब कहीं जाकर गड्ढा भी भर गया और टोपी भी भर गयी।

"अब मैं चला। तुम लोग निश्चिंत रहो।" कहकर छोटे भाई ने जलराक्षस के लड़के को भेज दिया। फिर पूरा सोना लेकर अपना गाँव चला गया। वहाँ उसने बड़ा मकान खरीदा और ज़मींदार की तरह आराम से जिन्दगी गुज़ारने लगा।

उसके दोनों बड़े भाई उसके पास आये और पूछा "इतना सारा पैसा कहाँ से आया?" "तुम लोगों ने मेरे हिस्से में रस्सी दी और उसमें मैंने फंदे कसे। जंगल में जंतुओं को पकड़ा और धन कमाया।" छोटे भाई ने कहा।

"वह रस्सी हमें भी उधार में देना। उसे सुरक्षित लौटा देंगे।" भाइयों ने कहा।

"ले लो" कहकर उसे रस्सी का ढ़ेर दे दिया। किन्तु वह रस्सी उसे वापस नहीं मिली। किसी को भी मालूम नहीं कि उस रस्सी को लेकर उसके भाई कहाँ गये और उनपर क्या बीता।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, जुलाई, १९९६ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

S.G. SESHAGIRI

S.G. SESHAGIRI

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० मई, '९६ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

मार्च, १९९६, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **कुर्सी नहीं यह झूला है**

दूसरा फोटो : **नाव नही यह हिंडोला है**

प्रेषिका : **यशवंत कुमार बरेठ**

रेल्वे माल धक्का, क्वार्टर नं. १६२/९, रायगढ़ - पो. मध्य प्रदेश - ४९६ ००१

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA (Hindi) May 1996 Regd. No. M. 5452